चन्दामामा

माँ-बच्चों का मासिक पत्र





एक देश का एक राजा था। उसकी एक ही लड़की थी। वह बहुत सुन्दर थी। इसलिए कई युवक आकर राजा से उसका हाथ माँगते। उसे तङ्ग करते।

राजा बहुत समझदार था। उसे कोई धोखा नहीं दे सकता था। इसलिए अपनी लड़की का वर निश्चित करने के लिए उसे एक बात सूझी। उसने राज्य भरमें यह घोषणा करवा दी- "मुझे जो धोखा देने में सफल होगा, उसको मैं अपनी लड़की दूँगा। साथ आधा राज्य भी। जो कोई इस सम्बंध में प्रयत्न करके हार जायेगा उसको कोड़े लगाये जायेंगे।"

राजा बड़ा चालाक था। उसको अगर धोखा न दे पाते तो कोड़े खाने होते। फिर भी सुन्दर राजकुमारी से शादी करने की आशा से बहुत से युवक आये। वे राजा को धोखा न दे सके। उनको कोड़े लगे और वे चले गये।

उस नगर में एक रईस था। उसके तीन लड़के थे। उनमें से दोनों बड़े लड़के अच्छे अक्लमन्द थे। तीसरा एकदम भोन्दू था। वह निखट्टू था। कोई काम-काज न था। हमेशा नाखून कुरेदता बैठा रहता। उसको सब "बुद्धु" कहते। रईस के बड़े लड़के ने एक बार पिता से कहा- "पिताजी! राजकुमारी से विवाह करने के लिए सब प्रयत्न कर रहे हैं। मैं भी प्रयत्न करूँगा।"

"जा बेटा, करो। सब प्रयत्न करनेवाले क्या तुमसे अधिक अक्लमन्द है?" पिता ने पूछा।

बड़ा लड़का राजमहल में गया। अपना कार्य बताकर उसने राजा को देखना



उसके आने का काम मालूम हुआ तो सैनिक उसको भी राजा के कमरे में ले गये। उसने भी खिड़की में से बाहर देखकर कहा-"यह क्या? पेड़ पर बैठे कौवे की पीठ पर तीन सफेद लकीरें हैं।"

"कौओ की पीठ पर तीन सफेद लकीरें होना झूठ है; पर तेरी पीठ पर कोड़े पड़ना सच है। इसे ले जाकर, कोड़े लगाकर भेज दो।" राजा ने कहा।

चाहा। सैनिक उसको राजा के कमरे में ले गये। राजा को नमस्कार करते हुए खिड़की में से बाहर देखकर उसने कहा-"वे जो तीन काली बत्तखें दिखाई दे रही हैं कितनी सुन्दर हैं।"

"तुम्हारी अक्ल तो मारी गई मालूम होती है। देखने के लिए एक काली बत्तख काफ़ी नहीं है! इसे ले जाकर कोड़े लगाओ और भेज दो।" राजा ने कहा।

जब बड़ा लड़का कोड़े खाकर घर लौटा तो मञ्झले को भी राजा को धोखा देने की सूझी।

वह भी पिता की अनुमति लेकर राजा के दर्शन करने गया। जब

जब मञ्झला भी अपमानित होकर लौटा तो बुद्धु ने पिता से कहा कि वह राजा को धोखा देकर राजकुमारी से विवाह करेगा।

"तू सबसे छोटा है। क्या तू वह काम कर सकेगा, जो तेरे भाई नहीं कर सके हैं? तू तो यूँ भी बुद्धु है।" पिता ने कहा। परन्तु बुद्ध ने जिद पकड़ी। "अच्छा, अगर तेरी इतनी मर्जी है तो जा, कोड़े खाकर आ।" पिता ने कहा।

तीसरा लड़का, दीवार पर लटका पुराना अङ्गोछा लेकर, उसे झाड़कर, हाथ में लेकर राजा के महल की ओर गया। उसे रास्ते

में एक स्त्री सिर पर एक टोकरे में हण्डे भरके ले जाती हुई दिखाई दी।

"क्यों यह घड़े कहाँ ले जा रही हो?" बुद्धू ने पूछा।

"बेचने के लिए, बेटा।" उसने कहा। बुद्धू ने उनके दाम पूछे। घड़े बेचनेवाली स्त्री ने कहा-"तीन रुपये।"

"पाँच रुपये दूँगा, पर जो मैं कहूँगा वह करोगी?" बुद्धू ने पूछा। वह मान गई। दोनों मिलकर राजा के घर तक गये। उसको क्या करना था; बुद्ध ने उसे साफ़ साफ़ बताया।

दोनों राजा के घर के सामने रुके, बुद्धू ने जोर से चिल्लाना शुरु किया-"मैं नहीं बेचूँगा। मुझे चाहिये। मुझे तङ्ग मत कर।"

उसका चिल्लाना सुन, राजा बाहर आया। बुद्धू को देखकर उसने पूछा-"क्यों यों चिल्ला रहे हो? बेचने के लिए तुम्हारे पास क्या है?"

"महाराज ! यह जादू का अङ्गोछा है। जो कोई इसे सिर पर रखेगा वह



हर किसी को धोखा दे सकेगा।" बुद्धू ने कहा।

"अच्छा, तो किसी को धोखा दो।" राजा ने कहा।

बुद्धू, अङ्गोछा सिर पर रख, इधर उधर देखता, घड़े बेचनेवाली स्त्री के पास गया। उससे उसने कहा-"तुम अपने इन घड़ों को फोड़ दो।"

तुरन्त वह स्त्री अपने घड़े, एक एक करके तोड़ने लगी।

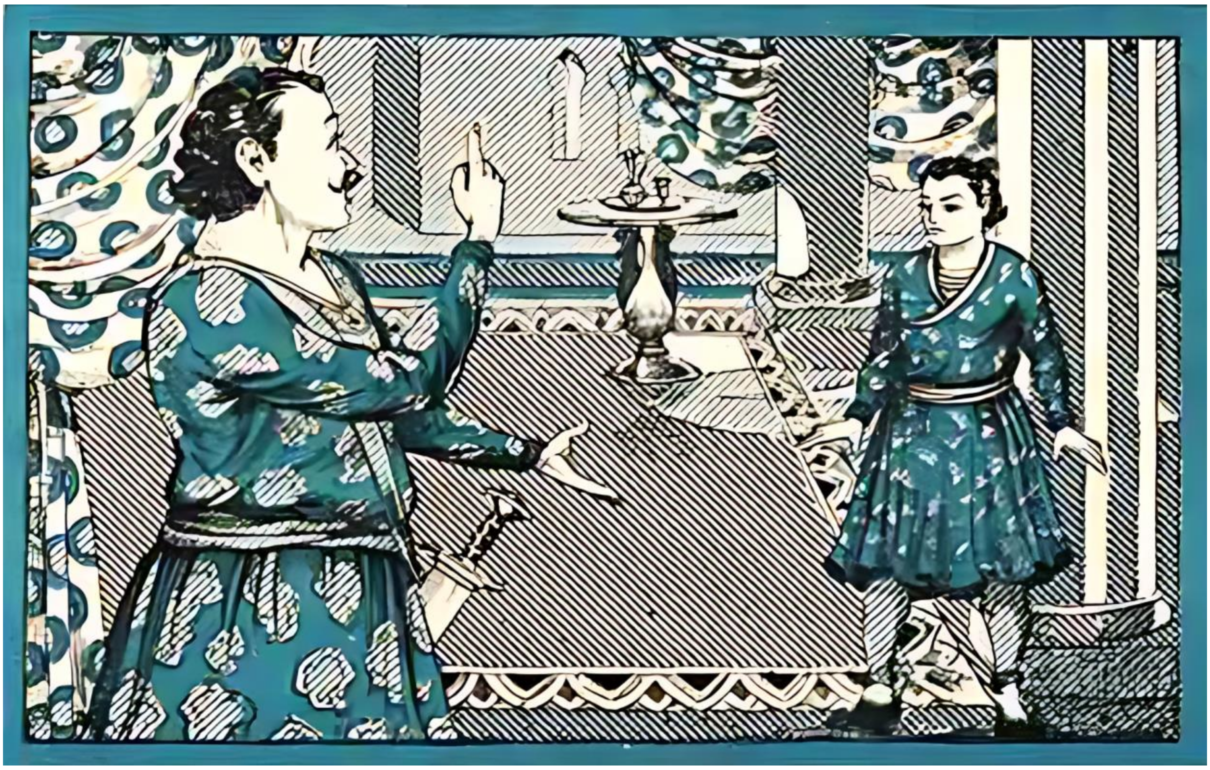
राजा को आश्चर्य हुआ। उस तरह की चीज का किसी दूसरे के पास होना, राजा ने सोचा, न उसके लिए, न उसकी लड़की के लिए ही श्रेयस्कर था। इसलिए उसने

उसे बेचने के लिए कहा। बुद्धू ने कहा चाहे मरना ही पड़े, मैं इसे न बेचूँगा। राजा ने जब थैली भर मोहरें दिखाई तो उसने सिर खुजाते हुए कहा-"अच्छा, जाने दो। कभी न कभी किसी न किसी को तो यह बेचना ही है।" उसके बाद, राजा की दी हुई मोहरों की थैली लेकर वह घर चला गया।

उसने उस धन से अच्छे कपड़े खरीदे। उन्हें पहनकर वह अगले दिन राजा के पास गया। उससे कहा-"आप अपनी लड़की का मुझ से विवाह कीजिये।"

राजा को न सूझा कि क्या कहे। वह तभी जान गया था कि अङ्गोछे में कोई महिमा न थी और वह उसे धोखा देने में सफल हो गया था। आखिर उसने कहा-"तूने मुझे कहकर धोखा नहीं दिया है। अगर तुम कल जबर्दस्ती मन्त्री को मेरे पास ला सके तो मैं विश्वास करूँगा कि तुम सचमुच अक्लमन्द हो।"

"अच्छा" यह कहकर बुद्धू चला गया। अगले दिन मन्त्री घर में रहा। उसने नौकरों को आज्ञा दी कि यदि बुद्धू आये तो उसे खूब पीटकर भेज दें।



इस बीच बुद्धू ने अपना वेश बदल लिया। एक बोरे में घुस गया और लुढ़कता लुढ़कता मन्त्री के घर पहुँचा। यह देख सिपाहियों ने बोरे के पास जाकर पूछा-"कौन है इस बोरे में?"

"हुश, बात न करो।" बुद्धू ने कहा। सैनिकों ने जाकर यह बात मन्त्री से कही। उसने बाहर आकर बोरे में घुसे बुद्धू से पूछा-"तुम कौन हो?"

"बात न कीजिये। यह ज्ञान का थैला है। मुझे कई बातें बताता है।" बुद्धू ने कहा।

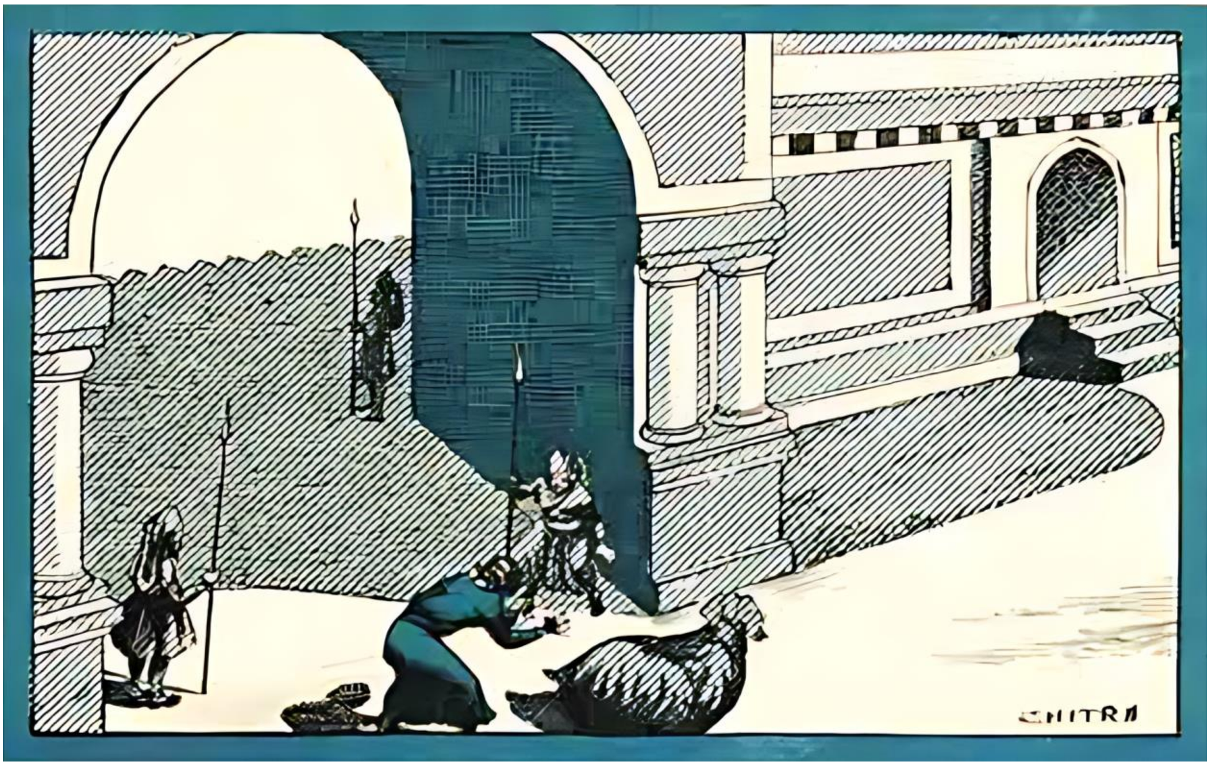
"अच्छा तो एक बात तो बताओ।" मन्त्री ने कहा।

"यह थैला बता रहा है कि कल जिसने राजा को धोखा दिया था वह सोलह योद्धाओं के साथ तुम्हारे घर पर हमला बोलने जा रहा है।" बुद्धू ने कहा।

"तब मुझे क्या करना चाहिए?" मन्त्री ने घबराते हुए पूछा।

"थैले से पूछिये।" बुद्धू ने कहा।

मन्त्री ने थैले को खोलकर बुद्धू को बाहर आने दिया। मन्त्री ने बोरे में बैठ



कर पूछा-"मुझे क्या करना चाहिए?" बोरे से पूछा। इतने में बुद्धू ने बाहर से बोरा बन्द कर दिया। बोरे को कन्धे पर डाल वह राजा के पास गया और उसके सामने उसे धर दिया।

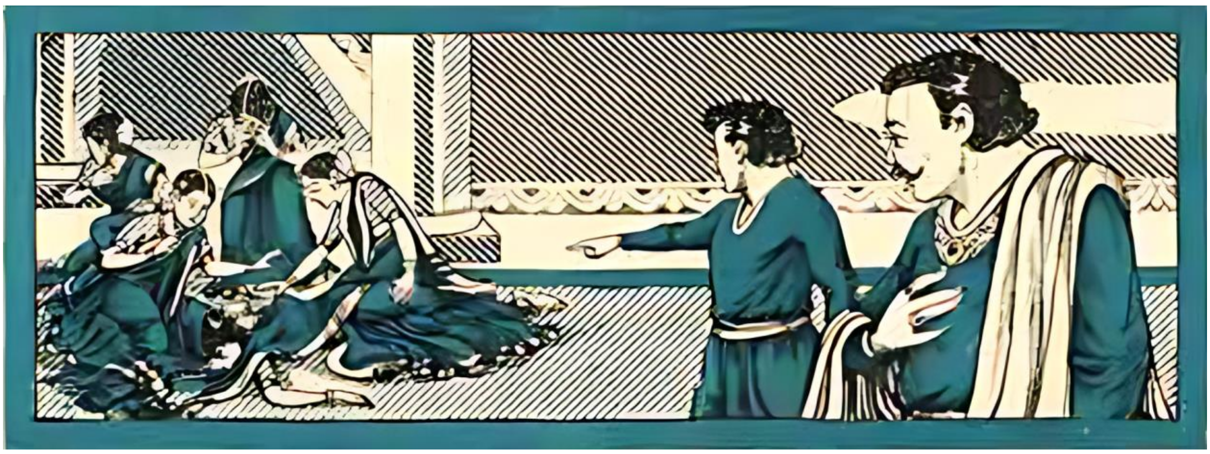
"तुम परीक्षा में जीत गये हो। कल अन्तःपुर मैं आकर मेरी लड़की को पहचान कर उससे शादी कर लो। पर याद रखना मेरी लड़की के पास अस्सी दासियाँ हैं। उनमें से तुझे मेरी लड़की को ही पहचानना होगा। तुझे कोई दिखायेगा नहीं। अगर तुम मेरी लड़की को न पहचान सके तो तुम्हारी शादी तो क्या होगी कोड़े जरूर लगेंगे।" राजा ने कहा।

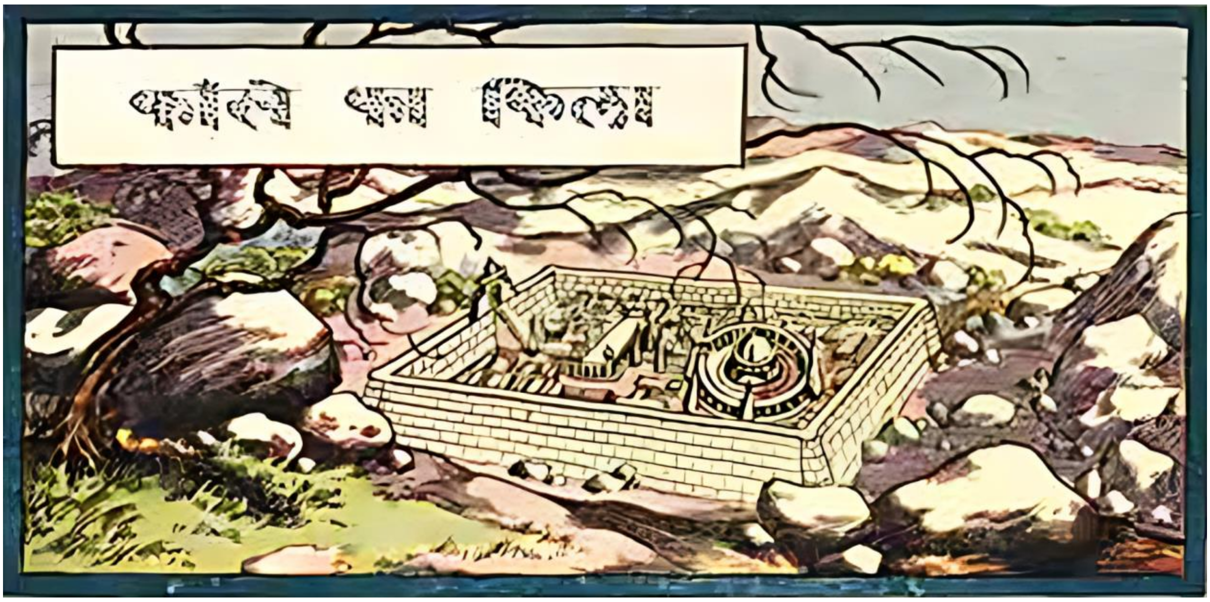
अगले दिन एक छोटी थैली में एक चूहे को रखकर वह अन्तःपुर में गया। जब वहाँ वह पहुँचा तो इक्यास्सी कन्यायें एक तरह के कपड़े पहन कर बैठी हुई थीं।

"इनमें मेरी लड़की कौन है, पहचानो।" राजा ने कहा।

बुद्धू ने वह थैली खोली और चूहे को उन लड़कियों में छोड़ दिया। कन्यायें सब चिल्लाती इधर उधर भाग गई। परन्तु उनमें से एक ही बेहोश हुई। तुरन्त वे कन्यायें चूहे को भूल गई और मूर्छित कन्या की शुश्रूषा करने लगीं।

बुद्धू ने मूर्च्छित कन्या को दिखाकर कहा-"यही आपकी लड़की है।" राजा तब करता भी तो क्या करता? अच्छा मुहूर्त देखकर उसने दोनों का विवाह कर दिया। बुद्धू को राज्य भी दे दिया। बुद्धू ही सबसे अधिक अक्लमन्द निकला। वह राजकुमारी के साथ सुख से गार्हस्थ्य जीवन बिताने लगा।





[२]

[माहिष्मती के राजा यशोवर्धन ने अपने छोटे लड़के गुणबर्धन का पट्टाभिषेक करने का नियय किया। परन्तु इसका वीरपुर के सामन्त सूर्यवर्मा ने विरोध किया। सर्पकेतु नामक सामन्त गुणवर्धन से साजिश करके सूर्यवर्मा को मारने के उद्देश्य से छुपा रहा। फिर उस पर उसने यकायक हमला किया..]

सूर्यवर्मा जान गया कि उसे शत्रुओं ने घेर लिया था। वह यह भी जान गया कि वह शत्रु कौन था। "मारो काटो, सूर्यवर्मा जिन्दा बच गया तो तुम जिन्दा न बचोगे।" ये बातें उसे सुनाई दीं। वह ताड़ गया कि वह आवाज सर्पकेतु की थी। सूर्यवर्मा की तलवार हवा में भयङ्कर शब्द कर रही थी। सामने के शत्रु का सिर और बगलवाले शत्रु का हाथ उसने एक साथ उड़ा दिया। परन्तु ठीक उसी समय चार और सैनिकों ने आकर उसे घेर लिया। सर्पकेतु चिल्ला चिल्लाकर अपने सैनिकों का हौसला बढ़ा रहा था। हो हल्ला हो रहा था।

सूर्यवर्मा ने सोचा कि उसकी मृत्यु होकर रहेगी। उसे यकायक चन्द्रवर्मा याद आया। यह वह समझ गया था कि सर्पकेतु उसके राज्य पर अवश्य आक्रमण कर के



रहेगा। अगर पहले ही मैं अपने लड़के को सावधान कर सका तो कितना अच्छा होगा।

"सुबाहू, सुबाहू!" पुकारते पुकारते सूर्यवर्मा ने एक घुड़सवार को अपनी तलवार के घाट उतार दिया। दूसरे के घोड़े के कलेजे में तलवार घुसा दी। यह मौका देख उसने अपना घोड़ा पीछे मोड़ा। इतने में "जी हुजूर!" जवाब सुनाई दिया।

"तू, तुरन्त वीरपुर जाकर चन्द्रवर्मा से.. !" अभी वह बात खतम न कर पाया था कि एक शत्रु सैनिक ने आकर पीछे से तलवार मारी। सूर्यवर्मा- "अरे...." कराहता, कराहता घोड़े पर से नीचे गिर गया। उसी समय और कई ने भी उस पर चोट की। जगह जगह उसके शरीर से खून बहने लगा।

"यह देखो, कोई भागा जा रहा है। उसका पीछा करके मार दो। यह खबर पहले वीरपुर नहीं पहुँचनी चाहिये।" सूर्यकेतु जोर से चिल्लाया। तुरन्त पाँच छः घुड़सवार सुबह के पीछे भागे। उसका पीछा करने लगे।

सूर्यवर्मा के सेवकों में सुबाहू बहुत ही विश्वासपात्र था। वह छुटपन से सूर्यवर्मा की सेवा कर रहा था। सुबाहू, समझदार, अक्लमन्द तो था ही। साथ ही साथ बहादुर और बलवान भी था। चतुर और अनुभवी योद्धा था।

जब वह जान गया कि मालिक की रक्षा करना सम्भव न था, सुबाहू वहाँ से भाग कर इस दुखद घटना के बारे में चन्द्रवर्मा को बताना चाहता था। इतने में सूर्यवर्मा की बात सुनाई दी। सुबाहू ने अपने घोड़े को शत्रुओं के बीच में से एक

तरफ हटाया और पहाड़ी रास्ते से तुरन्त निकल गया।

घोड़ा बहुत तेजी से जा रहा था। अगर सुबाहू को बीरपुर पहुँचना था तो उसको पहाड़ी रास्ते से जाना था। बह रास्ता तङ्ग था। दो घोड़ों के आमने सामने से गुज़रने का भी स्थान न था। पथरीला भी था।

घोड़े को पहाड़ पर चढ़ाते हुए सुबाहू ने पीछे मुड़कर देखा तो उसका पीछा करनेवाले आश्विक भी एक के पीछे एक घोड़े पहाड़ पर चढ़ा रहे थे। सुबाहू और उनमें इतना फासला था कि यह बाण के लिए काफी था और नहीं भी था। अगर उस फासले को न बढ़ाया गया तो वह शत्रुओं के बाणों का शिकार हो जायेगा, यह सुबाह समझ गया।

वह यह सोच ही रहा था कि पीछे से एक बाण आया और उसके दस बारह गज पीछे एक पत्थर पर गिरकर, टुकड़े टुकड़े हो गया।

सुबाहू ने अपने घोड़े को ऐंड मारी। वह और जोर से चलने लगा। बाणों का शब्द और चिल्लाना मात्र उसे



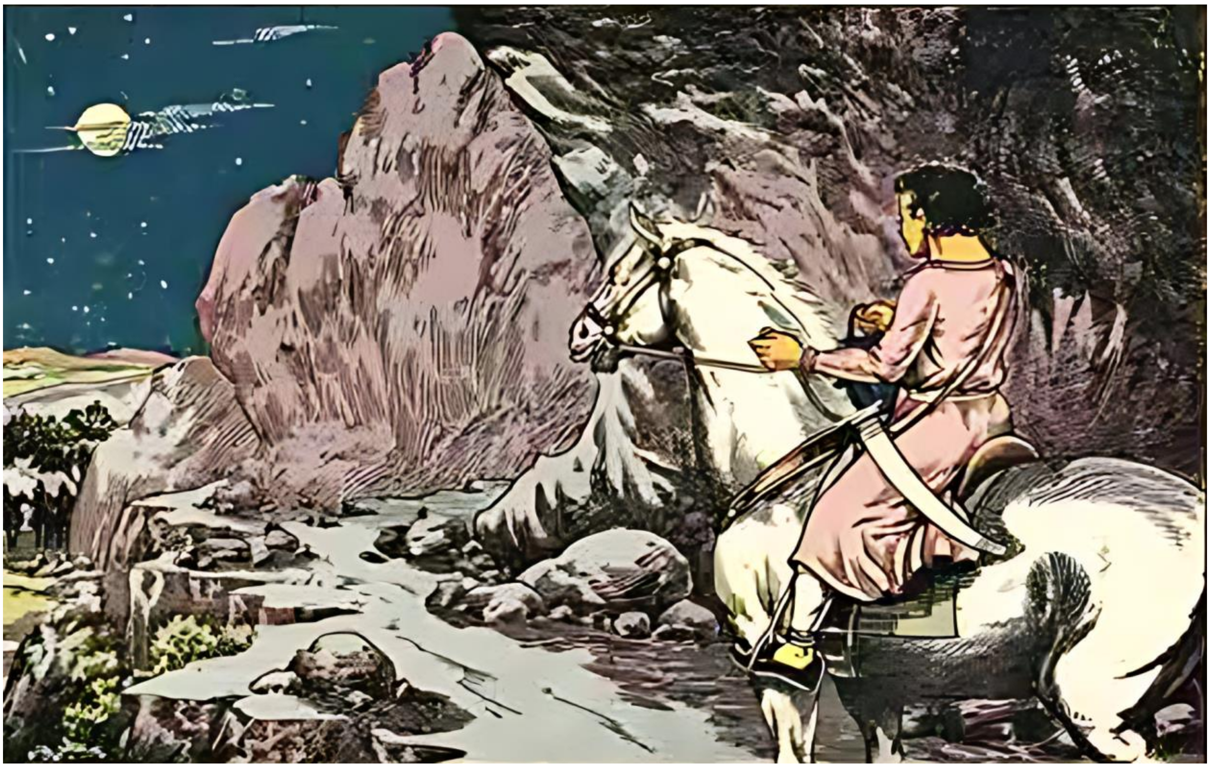
सुनाई देता था। थोड़ी देर बाद उसने फिर पीछे मुड़कर देखा। शत्रु और उसके बीच का फासला कुछ और बढ़ गया था। परन्तु वे पीछा छोड़ते नजर न आते थे। उसके पीछे चे घोड़े भगाते निरन्तर चले आ रहे थे।

तङ्ग पहाड़ी रास्ते पर सुबाहू अपने घोड़े को होशियारी के साथ चला रहा था। उसके एक तरफ ऊँचा पहाड़ था और दूसरी तरफ गहरा खड्ड था। अगर घोड़े का कहीं पैर फिसल गया तो उसके नीचे गिरकर टुकड़े टुकड़े होने में कोई सन्देह न था। यही नहीं, अन्धेरा भी हो रहा

था। रास्ता भी साफ साफ नहीं दिखाई देता था। घोड़ों की आवाज और उनके खुरों से गिराये गये पत्थरों के लुढ़कने के शब्द से उसे मालूम हो रहा था कि शत्रु उसका पीछा कर रहे थे। फिर भी वह धीरज बान्धे चलता जाता था।

कुछ देर बाद, जब गाढ़ा अन्धेरा हो गया तो चन्द्रमा उदय हुआ। रास्ता और चक्कर काट रहा था। उस समय यकायक सुबाहू को खड्ड के उस तरफ मोड़ के बादवाले रास्ते पर शत्रु दिखाई दिये। दस-पन्द्रह मिनट पहले ही वह उस रास्ते से आया था। वह खड्ड से पार बहुत समीप मालूम पड़ते थे। "अब उनके लिए बाण छोड़ने का अच्छा मौका है। यह सोचकर वह घोड़े से उतरनेवाला ही था कि एक बाण आकर उसके घोड़े के पेट पर लगा।

घोड़ा अगले दो पैर उठाकर जोर से चिल्लाया, अन्धे की तरह पहाड़ से टकराया। फिर एक तरफ गिर गया। उसके साथ सुबाहू भी नीचे गिर गया। उसके बाद, घोड़ा हिनहिनाता खड्ड की ओर लुढ़का। सुबाहू का पैर रिकाब में फँस गया था।

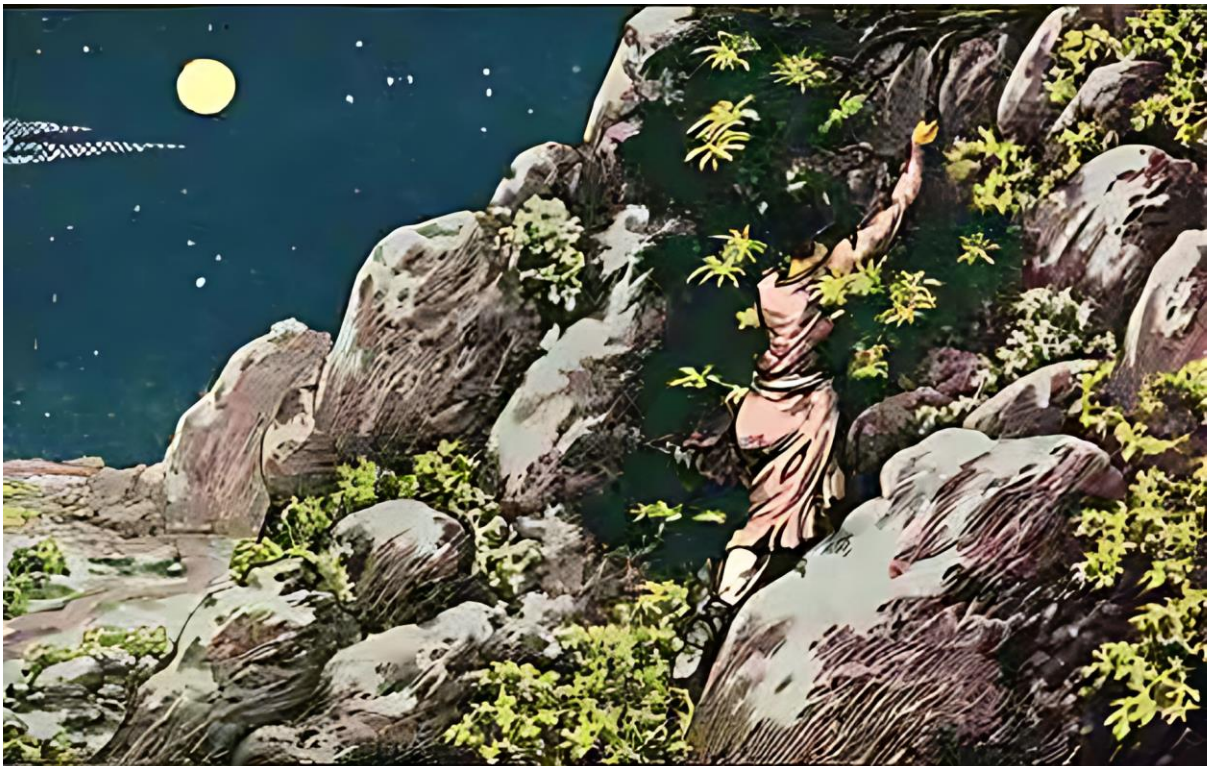


इसलिए वह भी खड्ड की ओर लुढ़कता जाता था। कुछ दूर बाद लुढ़कने पर उसको एक पेड़ की शाखा मिली। उसने उसको दोनों हाथों से जोर से पकड़ लिया। उसके पैरों से रिकाब खिसक गया। घोड़ा थोड़ी दूर और लुढ़का फिर खड्ड में जा गिरा।

खड्ड से उस तरफ के मार्ग से, एक साथ चिल्लाना, तालियाँ बजाना, उसे सुनाई दिया। सुबाहू ने सोचा कि शत्रु यह सोच रहे हैं कि उन्होंने उसे मार दिया है। उनका ख्याल है कि मैं भी घोड़े के साथ गिरकर टुकड़े टुकड़े हो गया हूँ। मर गया हूँ।

सुबाहू, शाखा के पास बिना हिले-जुले रह गया। यद्यपि वह अन्धेरे में था, तो भी यदि वह हिलता डुलता तो चान्दनी में उसको शत्रु पहचान सकते थे। तब एक बाण उसके प्राणों को भी समाप्त कर देता। इसलिए वहाँ से हिलना उसने खतरनाक समझा।

सुबाहू ने शाखा की आड़ से शत्रुओं की ओर देखा। घोड़ों से उतरकर, घुटनों के बल बैठकर चारों ओर देखकर,





वे फिर अपने घोड़ों के पास गये। उसके बाद उन्होंने आपस में कुछ बातचीत की। सुबाहू सोच ही रहा था कि उन्होंने उसे पहचान लिया होगा कि उसे इतने में उनकी हँसी सुनाई दी। जिस रास्ते से वे आये थे फिर उन्होंने उस तरफ घोड़े मोड़ दिये। वे हँसते हँसाते वापिस जाने लगे।

सुबाहू ने लम्बी साँस छोड़ी। रिकाब में पैर फँस जाने के कारण उसमें मोच आ गई थी। फिर भी उसे दर्द नहीं मालूम हो रही थी। वह शत्रुओं के हाथ से बच गया था। सूर्योदय से पहले वह वीरपुर पहुँचकर चन्द्रवर्मा को इस आपदा के बारे में बता सकता था और सर्पकेतु से बदला लेने का उपाय सोचा जा सकता था।

शत्रु सैनिकों के मोड़ पार करने के बाद सुबाहू शाखाओं की आड़ से बाहर आया। उसके कपड़े चीथड़े चीथड़े हो गये थे। शरीर पर कई जगह चोट लग गई थी और खून बह रहा था। उसने वहाँ से मुट्ठी भर पत्ते तोड़े। उसको खूब मसलकर, निचोड़कर उसके रस को घावों पर लगा दिया। उसे उस समय चीते का चीत्कार सुनाई दिया।

वह चीत्कार सुनते ही सुवाहू घबरा गया। उसे याद आयी कि उस पहाड़ में केवल चीते ही नहीं थे, भेड़िये व अजगर भी थे। उनके शिकार होने से बचने के लिए आवश्यक था कि उसके पास कोई हथियार हो। परन्तु उसकी ढाल और तलवार घोड़े पर से गिर गिरा गई थीं उसके पास कुछ न था।

सुबाहू ने इधर उधर देखा। उसने एक टहनी को तोड़ लिया। पत्थरों को, पौधों



को, शाखाओं को पकड़ पकड़कर धीमे धीमे रेङ्गता वह रास्ते पर आया। उसने लम्बी साँस छोड़ी।

सुबाहू जानता था कि किस रास्ते पर जाने से वीरपुर पास पड़ता था। वह चड़ी सावधानी से चलता चलता आधी रात के समय पहाड़ से सटे हुए एक गाँव के पास पहुँचा। वह बुरी तरह थक गया था।

ग्राम अभी कुछ दूर था कि सुबाहू ने मशालों की रोशनी, उसके चारों ओर घेरे खड़े कुछ लोगों को बातचीत करते देखा। इतनी रात में, ग्रामवासियों को ग्राम के बाहर क्या काम है? सुबाहू को सन्देह हुआ कि कहीं ये मशाले डाकुओं की तो नहीं है। इतने में उसे घोड़ों की आहट सुनाई दी। रास्ते पर भागते हुए घुड़सवारों ने कहा-"अरे अभी यहीं हो? चलो, बढ़ो।" वे यह कहकर आगे बढ़ गये। जाने कहाँ वे सर्राटे से भागे जा रहे थे।

इस घटना को देखकर सुबाहू को आश्चर्य ही न हुआ, परन्तु सन्देह भी हुआ। मशालवाले डाकू न थे। घुड़सवारों की वरदी से मालूम होता था जैसे वे सैनिक हो। तो क्या वे वीरपुर के सैनिक हैं? या सर्वकेतु के सैनिक हैं? मशाल के चारों ओर खड़े मनुष्यों को किस ओर जाना है। आखिर बात क्या है? यहाँ हो क्या रहा है?

सुबाहू ने सोचा इन सन्देहों का निवारण करने का एक ही मार्ग था और वह था मशालों की जगह पहुँचना। अगर वह वीरपुर का ही गाँव था तो गाँववालों से एक घोड़ा लेकर जल्दी चीरपुर पहुँचा जा सकता था। अगर वे शत्रु हुए तो...

सुबाहू ने अपनी पोषाक की ओर देखा, फिर उसको हौसला हुआ कि उसको उन चीथड़ों में कोई नहीं पहचान सकता था। वह आगे बढ़कर चुपचाप मशालवालों के पास गया।

सुबाहू जब पास पहुँचा तो मशाल के चारों ओर खड़े हुए आदमियों में से एक ने जोर से कहा-"यह देखो, कोई भिखारी आता मालूम होता है। अबे, अब तुझे भीख माँगने की जरूरत नहीं। हम सवेरा होने से पहले वीरपुर को लूटने के लिए जा रहे हैं। हमारे साथ आओगे तो तुम्हें भी इतना मिलेगा कि किसी को तुम्हारे चौदहवीं पीढ़ी तक न कमाना पड़ेगा।"

सुबाह का होश जाता रहा। फिर उसने सम्भलकर कहा-"हाँ मालिक! मैं आपके साथ वीरपुर आऊँगा। मुझे कोई धन-सम्पत्ति कुछ नहीं चाहिए। अगर खाने को मुट्ठी भर मिल गया तो काफी है।"

दुसरा आदमी कुछ कहने को था कि कुछ घुड़सवार आकर चिल्लाये-"सर्पकेतु की जय।" फिर उन्होंने कहा-"तुम में कोई बीरपुर का न हो, देख लो, बाद में रोने से क्या फायदा?"

लोगों में से एक ने कहा-"यहाँ हम जितने हैं, एक दूसरे को पहचानते हैं। यह कोई अभी कहीं से आया है।"

घुड़सवारों ने आपस में एक दूसरे को देखा। फिर "हाँप" कहते हुए उन्होंने सुबाहू की ओर घोड़े बढ़ाये।

(अभी और है)





प्रतीकार

विक्रमार्क फिर एक बार पेड़ के पास गया। पेड़ से शव उतार कर, कन्धे पर डाल कर श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा-"राजा! तुम साहसी हो। परन्तु निष्कारण अपना साहस दिखाते तुम्हें देख मुझे आश्चर्य हो रहा है। क्योंकि मनुष्य प्राय: अपना बदला चुकाने के लिए असाधारण साहस दिखाते हैं। इसका सुन्दर दृष्टान्त दुर्गा है। मैं तुम्हें उसकी कहानी सुनाता हूँ ताकि चलने की थकान न मालूम हो। सुनो।" उसने यो कहानी सुनानी शुरु की।

किसी जमाने में वैशाली नगर में विनय नाम का एक जुलाहा रहा करता था। उसने दुर्गा से विवाह किया। क्योंकि वैशाली नगर का राजा असमर्थ था, इसलिए राज्य



में अराजकता पैदा हो गई। लोगों में कई गुट बन गये और उन में झगड़ा फसाद होने लगा। दुर्गा जब ससुराल आई तभी ये झगड़े शुरु हो गये थे। उस नगर में वीरभद्र नाम का एक धनी था। विनय और उसका बैर सालों से चला आता था।

राज्य में अराजकता तो थी ही, दिन दहाड़े हत्यायें भी होती थी। तब वीरभद्र ने अपने शत्रु विनय की एक दिन हत्या करवा दी।

इस हत्या के बारे में शहर में सबको मालूम हो गया। क्योंकि वैसी हत्यायें रोजमर्रे होती थीं इसलिए उस हत्या के सिलसिले में न कोई तहकीकात हुई, न हत्यारे को सजा ही दी गई।

पाँच छः आदमी मिल मिलाकर विनय का शव उसके घर ले गये। तब तक दुर्गा ने एक साल भी गृहस्थी न चलाई थी। उसका शव देखते ही वह पथरा सी गई। उसकी आँखों से एक बूँद भी आखें न निकला। पहले तो उसने पति के साथ सती होना चाहा पर फिर उसने अपना इरादा बदल लिया।

विनय की मृत्यु के समय दुर्गा को छ: महीने का गर्भ था। "मेरा लड़का होगा। वह बड़ा होने पर पिता की हत्या का बदला लेगा। उससे मैं वीरभद्र को मरवाकर ही मरूँगी। अगर मैं मर गई तो मेरे पति की हत्या का बदला कौन लेगा?" उसने सोचा।

सचमुच, विनय की मृत्यु के कारण दुर्गा अनाथ-सी हो गई थी। उसका न कोई मायके में था न ससुराल में ही। अब उसके लिए बदला ही बदला था। उसके पैर भारी थे। फिर भी वह दिन रात सूत काटती और उसे बेचकर जो

कुछ पैसा मिलता उससे अपने को और गर्भ के शिशु को पालती, अकेली रहने लगी। बदले की भावना उसमें इतनी प्रबल थी कि उसे ये सब कष्ट कष्ट नहीं लगते थे।

प्रसव समय तक वह श्रम करती रही और बिना किसी की सहायता के उसने जैसे कि उसकी इच्छा थी, एक लड़के को जन्म दिया। अभी बच्चे ने आँखें भी न खोली थीं कि उसने उससे कहा-"बेटा! तुम जानते हो तुम क्यों पैदा हुए हो। तुम अपने पिता के हत्यारे वीरभद्र को मार कर बदला चुकाने के लिए पैदा हुए हो। तुमसे वह काम करवाने के लिए अगर मुझे आग में भी कूदना पड़े तो कूदूँगी।"

दुर्गा ने उस लड़के का नाम विक्रम रखा। विक्रम के जन्म के कुछ दिनों बाद, इन्द्रसेन नाम के महाराजा ने वैशाली नगर पर हमला किया। उसको जीतकर शहर में फिर शान्ति और सुरक्षा स्थापित की। यह इन्द्रसेन राजा बहुत ही शक्तिशाली, बड़ा धैर्यशाली और वीर था। जब वह शिकार पर जाता तो शेर, बाघ आदि को भी जीते जी पकड़कर लाता।



एक दिन वह शिकार पर गया और एक शेर को पकड़ लाया। उसने अपने साहस के चिन्ह के रूप में, उसको वैशाली नगर भेजा। नगर के मध्य में उसके लिए एक घर बनवाया, उसके खाने-पीने के लिए भी आवश्यक प्रबन्ध किया। वैशाली के नागरिकों के लिए सिंहगृह ही एक देवालय हो गया। उन्होंने शेरों के बारे में सुना तो था पर स्वयं जीवित शेर को न देखा था। फिर वह शेर तो बहुत बड़ा भी था। उसके गले के बाल क्या थे, पेड़ों का झुरमुट लगता था। कई लोग उस सिंह

को "नरसिंहावतार" समझकर, साष्टाङ्ग करते। रोज हजारों स्त्री, बच्चे, पुरुष उसको देखने सिंह-गृह आया करते। उस सिंह को देखने के लिए आसपास के गाँवों से ही लोग न आते, अपितु दूर देश से भी आया करते।

सिंह भी मन्दिर की मूर्ति की तरह हो गया। चाहे कितने ही उसे देखने आयें पर वह किसी तरफ न देखता। उसकी नज़र कहीं और रहती। अगर उससे कोई कुछ कहता भी तो वह न सुनता।

इस तरह कई दिन बीत जाने के बाद सिंह अपने गृह से एक दिन बाहर आया। उसको खाना देनेवाले ने उस दिन सवेरे उसके घर के किवाड़ ठीक बन्द न किये थे। उसके चले जाने के बाद शेर ने आसानी से लोहे के किवाड़ खोल दिये और शान से इस तरह बाहर निकला जैसे गली में टहलने निकला हो। उसने कोई ऐसी हरकत न की जिससे यह पता लगे कि वह कैद से छूटकर जा रहा था।

गली में शेर को जाता देख जनता में हाहाकार मच गया। वे घरों में घुस



गये। किवाड़ बन्द करके वे भय से काँपने लगे। शेर छूट गया है, यह खबर देखते देखते सारे शहर में फैल गई। वैशाली नगर की सड़कें व गलियाँ कुछ देर में ही निर्जन हो गईं, जैसे किसी ने कोई जादू कर दिया हो।

शेर ने लोगों के हाहाकार को भी न सुना। उनके भय की भी उसने परवाह न की। रोज़ की तरह उसकी नज़र कहीं और थी। जो लोग उसको देखकर भाग रहे थे, उनका उसने पीछा न किया। वह इसलिए भी और तेज़ नहीं चला कि लोग उसे पकड़कर फिर बन्द कर देंगे। टहलने के लिए राजा की तरह, वह बिना इधर उधर देखे, सामने नजर किये, नगर के बाहर के मैदान की ओर गया।

उस मैदान में उस समय कुछ बच्चे खेल रहे थे। शेर छूटकर भाग गया था-- यह खबर सब जगह पहुँच गई थी; पर बच्चों तक न पहुँची थी। शेर को दूरी पर देखकर ही वे हवा हो गये। उनमें से दो वर्ष का लड़का जब भागा तो नीचे गिर गया। बच्चों को देखते ही शायद शेर को भी खिलवाड़ करने की सूझी। वह





उछलता कूदता बच्चे के पास गया। उसके शरीर को उसने अपने पञ्जे से सहलाया। फिर यथापूर्व अन्यमनस्क-सा हो गया। वह लड़का दुर्गा का लड़का विक्रम ही था। यद्यपि नगरवासी किवाड़ बन्द कर घरों में छुप गये थे फिर भी कोई शेर का पीछा कर रहा था। यह किधर जा रहा था, कैसे जा रहा था यह सब घर में छुपे लोगों को मालूम हो ही रहा था। जब दुर्गा को कानों कान यह मालूम हुआ कि शेर मैदान में गया है तो उसके ऊपर के प्राण ऊपर रह गये और नीचे के नीचे।

उसने थोड़ी देर पहले अपनी आँखों अपनी लड़के को उस मैदान में खेलते देखा था। अगर शेर ने उसका कुछ किया तो उसका सारा जीवन शून्य हो जायेगा। इतने दिनों से वह बदले की भावना, जिसे वह अपने पसीने से सींचती आई थी, निरर्थक हो जायेगी।

दुर्गा अपने घर के किवाड़ खोलकर सड़क के किनारे चलती चलती, जल्दी जल्दी मैदान की ओर गई। उसको किञ्चित भी यह भय न था कि शेर उसे मार देगा। जरूरत हुई तो वह शेर से लड़कर भी अपने लड़के की रक्षा करने के लिए तैयार थी।

जल्दी ही वह मैदान पहुँच गई। वहाँ उसने शेर को लेटे हुए देखा और उसके पैरों के नीचे अपने लड़के को भी देखा। वह हिल डुल नहीं रहा था। उसने सोचा कि शायद वह मर गया होगा। पर कहीं खून नहीं था। दुर्गा साँस रोककर जल्दी जल्दी शेर के पास गई। शेर की नज़र कहीं और थी। उसने उसकी और सिर भी न फेरा।

दुर्गा शेर के पास गई। उसने कँपती हुई आवाज में कहा-" नरसिंह स्वामी!

मेरे बच्चे को मत लेना। मुझे दे दो। उसके सिवाय मेरा इस संसार में कोई नहीं है।"

शेर ने अनसुना कर दिया।

"मेरे पति को उस दुष्ट वीरभद्र ने मार दिया था। मेरी माङ्ग की सिन्दूर मुश्किल से साल भर भी न रही। उसने मेरी जिन्दगी खाक कर दी। उससे बदला मैं इस बच्चे द्वारा ही ले सकती हूँ। अगर यह चला गया तो जितनी मुसीबतें मैंने झेली हैं, वे सब व्यर्थ जायेंगी। " दुर्गा ने सिंह के पास जाकर कहा।

वह शेर, जो कभी किसी की ओर न देखता था, उसने उसकी ओर देखा। ऐसा भी लगा जैसे वह दुर्गा की बात भी समझ गया हो। दुर्गा को और भी साहस आ गया। वह आगे बढ़कर बच्चे के पास गई। उसने कहा-"नरसिंह स्वामी! मैं अपने लड़के को ले रही हूँ। पञ्जा मत खोल। आपके नाखून लगने पर मेरे लड़के के शरीर पर जख्म हो जायेगा। बस, आ गया जरा थोड़ी देर और।" कहकर उसने शेर के



पैर के नीचे से बच्चे को धीमे धीमे खींच लिया।

शेर की दृष्टि फिर कहीं और थी। वह न दुर्गा की ओर देख रहा था, न उसके लड़के की ओर ही। दुर्गा अपने लड़के को छाती से लगाकर धीरे धीरे कदम रखती वहाँ से चली गई। आपत्ति के टल जाने के बाद उसे बहुत आनन्द हुआ। साथ ही साथ वह बहुत थक भी गई। बच्चे का बाल बाँका न हुआ था। "बेटा" पुकारने पर वह बोला भी। जब वह उसे निर्जन सड़क पर से ले जा रही थी तो दुर्गा ने उससे पूछा-"बेटा!

जो बातें मैंने शेर से कही थीं क्या वे तुमने सुनी? जो मैंने कहा था क्या तू समझ सका? बता।"

"समझ गया" विक्रम ने कहा।

कितने ही आदमी दुर्गा को अपने लड़के को, शेर के पास से लाते हुए देखकर चकित हुए। "वह किसी वर के कारण पैदा हुआ है, नहीं तो शेर के हाथ में पड़कर वह कैसे छूट आया?" सबने कहा। उस दिन लोगों ने उसका विक्रम नाम हटाकर, उसका नाम सिंहदत्त जो सार्थक था, रखा।

दुर्गा के अपने लड़के के ले जाने के बाद, राजा के भेजे हुए सैनिक आये। वे शेर को पिञ्जड़े में रखकर ले गये। उसे फिर ले जाकर सिंहगृह में रख दिया। उसने किसी पर भी हमला न किया।

इस घटना के होने तक वीरभद्र मजे से जी रहा था। वह यदि मिट्टी को भी छूता तो वह सोना हो जाता। उसके बहुत से बच्चे थे। घर में लक्ष्मी थी। पर जबसे शेर भाग गया था तब से उसके बुरे दिन आ गये। उसकी पत्नी मर गई। फिर उसके बाद, बच्चे भी एक एक

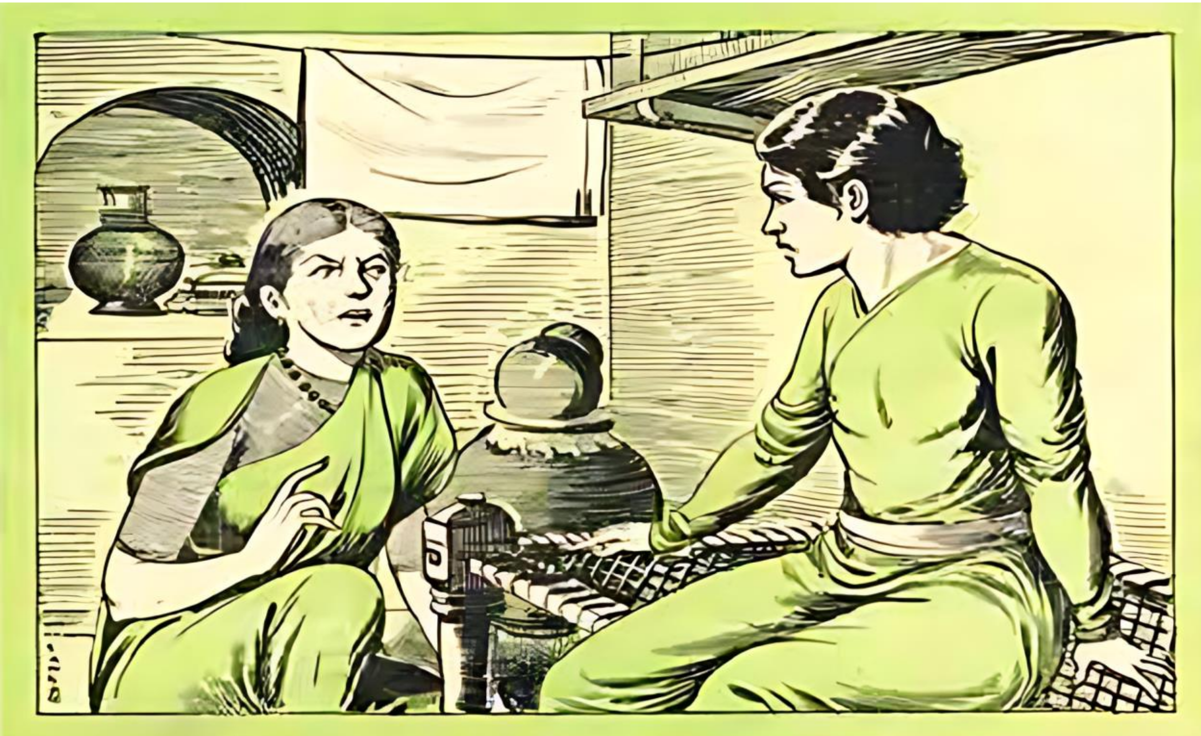


करके बीमार पड़े और मरने लगे। वीरभद्र की सम्पत्ति का भी ह्रास होने लगा।

वीरभद्र पहले कभी पाप से भय न करता था। अब उसमें वह भी आ गया था। "विनय की हत्या की थी, अब भुगत रहा हूँ। वह मामूली शेर नहीं है। उसमें कोई महिमा है। इसलिए ही विनय के लड़के को उसने मेरे लिए छोड़ दिया है। मैं जरूर उसके हाथों मारा जाऊँगा।" वह सोचने लगा था।

समय बीतता गया और सिंहदत्त हट्टा कट्टा होता जाता था। वह अब शहर में सभी का लड़का था। वह जो कुछ चाहता उसे कोई न कोई वह दे देता दुर्गा के बुरे दिन भी लद गये थे उसके लिए भोजन की कमी न थी। हर कोई उसकी परवाह करता।

यद्यपि उसके कष्ट दूर हो गये थे, पर वीरभद्र के प्रति उसकी बदले की भावना तनिक भी कम न हुई थी। वह अपने लड़के से अक्सर कहा करती-"बेटा! मैं उस दिन की प्रतीक्षा में हूँ जब तुम बड़े हो जाओगे और अपने पिता की हत्या का बदला लोगे। इस बीच





मुझे भय है कि कहीं वह वीरभद्र स्वामी तुम्हें उठा न ले जाये। उस दुष्ट की मौत तेरे हाथ ही होनी चाहिये और किसी तरह हुई तो मुझे सन्तोष न होगा।"

सिंहदत्त माँ की उन बातों को बड़े ध्यान से सुनता। वह सिंह का दर्शन करने प्रायः सिंह गृह जाता। कभी कभी वह शेर इस तरह भी देखता, जैसे उसको पहचान रहा हो। जब वह उस तरह देखता तो सिंहदत्त को बहुत खुशी होती।

सिंहदत्त ज्यों ज्यों बड़ा होता गया, त्यों त्यों वीरभद्र भी सोचता जाता कि उसकी मृत्यु उसी के हाथ बदी थी। यह उसके लिये अपरिहार्य सी थी। इसलिए वह अब मौत से न डरता था।

शेर बूढ़ा हो गया। यह भी सुना गया कि वह जल्दी ही मर जायेगा। सिंहदत्त रात दिन सिंह-गृह जाता और उसको देखता रहता। वह अब किसी की ओर न देखता था। सिंहदत्त चाह रहा था कि मरने से पहले वह एक बार उसकी ओर देखे। उसकी वह इच्छा पूरी भी हुई। शेर ने प्राण छोड़ने से पहले सिर उठाकर सिंहदत्त की ओर देखा। उसकी दृष्टि में सिंहदत्त को कुछ दुःख सा दिखाई दिया। शेर के मरने के कई दिनों बाद, सिंहदत्त को ऐसा लगा कि वह तब भी उसकी ओर निरन्तर देख रहा हो। यह एक विचित्र अनुभव था।

थोड़े दिन गुज़र गये। एक दिन दुपहर को दुर्गा ने अपने लड़के को बुलाकर उसके हाथ में छुरी देते हुए कहा-"बेटा, अब समय आ गया है, जब तुम्हें अपने पिता की हत्या का बदला लेना चाहिए। वीरभद्र किसी काम पर कोई और गाँव जा रहा

है। मालूम हुआ है कि वह शाम तक वापिस आ जायेगा। नगर के बाहर, जङ्गल में छुपकर, उस हत्यारे का काम तमाम करके आ।"

"अच्छा, माँ!" सिंहदत्त ने छुरा ले लिया। उस दिन वह शाम को जङ्गल गया, और वीरभद्र के आने की प्रतीक्षा करने लगा। सूर्यास्त होने से पहले वीरभद्र उस तरफ अकेला आया। सिंहदत्त पेड़ के पीछे से उसकी ओर लपका। उसे आसानी से नीचे गिरा दिया। उसकी छाती पर चढ़कर उसने छुरा निकाली।

वीरभद्र बूढ़ा हो गया था। सिंहदत्त चढ़ती जवानी में था। अगर वीरभद्र मुकाबला भी करता तो भी बच न सकता था। वीरभद्र मरने के लिए तैयार था, उसने सिंहदत्त की आँखों में देखा।

उसके ऐसा करने पर सिंहदत्त की छुरी ऊपर ही ऊपर रह गई। क्योंकि उस समय उसको शेर की वह दयनीय, दुख भरी दृष्टि याद हो आई। उस दृष्टि में कोई भय न था। पर अजीव दुःख सा था।

सिंहदत्त ने छुरी उठाकर दूर फेंक दी। वीरभद्र की छाती पर से उठकर वह



जङ्गल में कहीं चला गया। फिर उसे किसी ने न देखा।

बेताल ने यह कहानी सुना कर कहा-"राजा, मुझे एक सन्देह हो रहा है। सिंहदत्त ने माता की इच्छा के अनुसार, वीरभद्र को मारकर अपने पिता की हत्या का बदला क्यों नहीं लिया? अगर तुमने जान बूझकर इस प्रश्न का उत्तर न दिया, तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

उसका विक्रमार्क ने यों जवाब दिया-

"बदले के साथ प्रतिक्रिया भी होती है। इस सम्बन्ध में बदला लेना दुर्गा को था न कि सिंहदत्त को। परन्तु, सिंहदत्त ने माता का बदला चुकाने के लिए ही वीरभद्र को मारने का वचन दिया था। परन्तु जब वह यह करने गया तो उसे एक और बात मालूम हुई। उसको वीरभद्र और शेर एक से ही दिखाई दिये। दोनों क्रूर थे। दोनों दूसरों की हानि करते थे। वह वीरभद्र की तरह था। फिर भी उसने उसे न मारा था। उसने उसको पिता की तरह देखा। लोगों ने उसी का नाम उसे दिया था। अगर वह शेर बूढ़ा होकर उसको दिखाई देता तब भी वह उसे न मार पाता। उसी हालत में वीरभद्र उसको मिला। यद्यपि उसने उसके पिता को मारा था तो भी सिंहदत्त का ख्याल था, कि उसको मारने के लिए उसके पास आवश्यक कारण न थे।

क्योंकि वह अपनी माँ का बदला पूरा न कर पाया था, इसलिए वह घर वापिस न गया। कहीं और चला गया।"

राजा का इस प्रकार मौन भङ्ग होते ही वेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और वृक्ष पर जा बैठा।

(कल्पित)





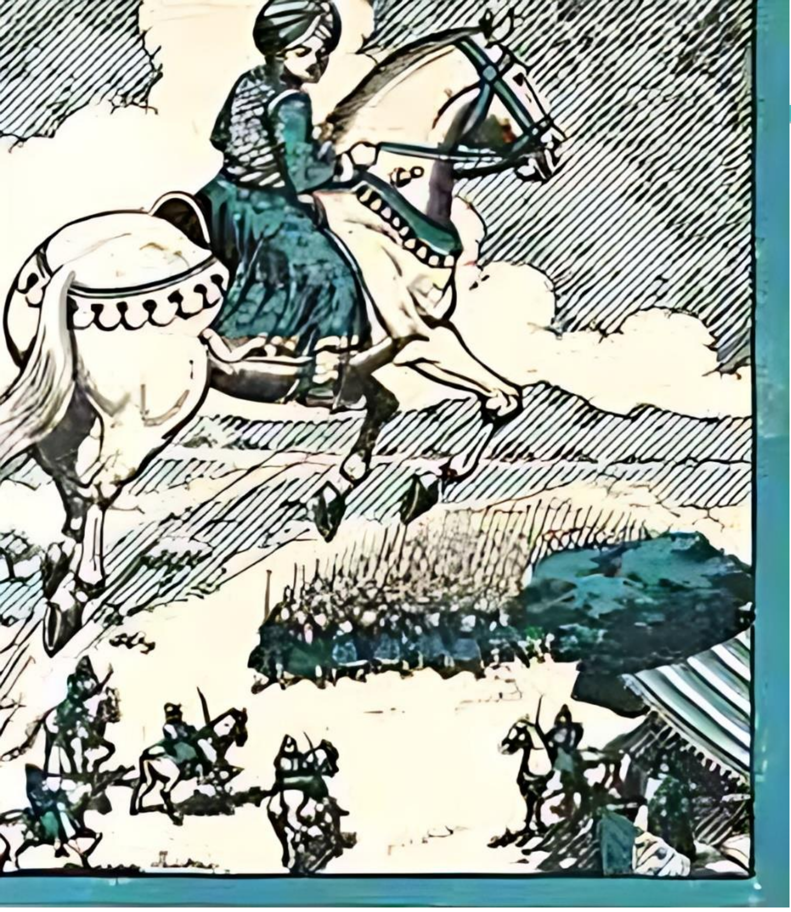
[३]

[राजकुमार अम्मार ने जादू के घोड़े पर आकाश में उड़कर उसको चलाने की सब कीले जान लीं। वह उस घोड़े पर एक देश के राजा के महल पर उतरकर, आधी रात के समय अन्तःपुर में घुसकर अत्यन्त सुन्दर, राजकुमारी शम्स अली नहर को देखकर, उससे प्रेम करने लगा। इतने में राजकुमारी का पिता आया। यह सोचकर कि उसकी बदनामी होगी, उसने चुपचाप उन दोनों की शादी करने का वचन दिया। अम्मार ने कहा कि यदि उसने अकेले राजा के अस्सी हजार हथियारबन्द सिपाहियों से उसे युद्ध करने दिया गया तो वह विवाह के लिए मान जायेगा। अगले दिन सेना को तैयार किया गया। तब अम्मार ने राजा से कहा-"मेरा घोड़ा राजमहल को छत पर है। उसे यहाँ मगाइए।" इस काम के लिए राजा ने अपने सेनापति को भेजा।]

सेनापति ने छत पर जाकर देखा कि एक सुन्दर घोड़ा खड़ा था। उतना सुन्दर घोड़ा उसने कभी न देखा था। उसने पास जाकर जो देखा तो उसे लकड़ी और हाथी दान्त का बना हुआ पाया। यह देखकर वह और उसके साथ आये हुए सैनिक ठठा मारकर हँसे।

"क्या इसी घोड़े पर चढ़कर वह युद्ध करेगा? कोई पागल मालुम होता है।" एक ने कहा।

श्री विमल चौधरी



"शायद इसमें कोई जादू है। कौन जाने।" एक और ने कहा।

सैनिकों ने उस घोड़े को उठाकर ले जाकर राजा के सामने रखा। तुरन्त उसको लोग घेर कर आश्चर्य से देखने लगे।

राजा ने अम्मार की ओर मुड़कर पूछा-"क्या यही तेरा घोड़ा है?" अम्मार ने हाँ कहा। "तो उस पर चढ़कर युद्ध के लिए निकलो।" राजा ने कहा।

"इन लोगों को दूर जाने दीजिये। उसके बाद मैं उस पर चढ़कर आपकी सेना को तितर बितर कर दूँगा।" अम्मार ने कहा।

"तुम उनका नाश करने में बिल्कुल न हिचकना क्योंकि वे तुम्हें मारने के लिए तैनात खड़े हैं।" राजा ने कहा।

लोगों के दूर हटते ही अम्मार ने घोड़े पर चढ़कर कील घुमाई। सब आश्चर्य से देख रहे थे कि हवा में वह धीरे से उठा और फिर यकायक तेजी से हवा में उड़ गया।

राजा ने अपने सैनिकों से कहा- "उसे पकड़ो, पकड़ो।" पर उड़ते आदमी को भला कोई आदमी कैसे पकड़ सकता है?

"महाराज! वह मनुष्य नहीं है। वह कोई भूत-प्रेत नहीं तो कोई जादूगर-सा है। इसलिए ही हमारी आँखों में धूल झोंक कर वह चला गया है।" राजा के नौकरों ने कहा।

राजा सन्तुष्ट हुआ कि उसका पिण्ड छूट गया था। उसने महल में जाकर अपनी लड़की को जो कुछ मैदान में गुजरा था, सुनाया। सब सुनने के बाद राजकुमारी का खुश होना तो अलग वह

जोर जोर से रोने लगी। वह देख राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ।

"बेटी! वह चोर है। झूठा है। दुष्ट है। पापी है। धोखेबाज है। उससे पीछा छूटने पर अल्लाह को दुआ देते हैं न कि इस तरह रोते हैं।" राजा ने अपनी लड़की को समझाया।

पिता के बहुत समझाने पर भी राजकुमारी का दुःख कम न हुआ। बल्कि बढ़ता ही गया। उसने पिता से कहा-"जबतक वह मुझे फिर से न दिखाई देगा तब तक मैं न खाऊँगी, न पिऊँगी और रोती रहूँगी।" लड़की को दुःखी देखकर राजा भी दुःखी हो गया।

इस बीच राजकुमार अम्मार जान गया कि उस शहर का नाम जिसे वह छोड़कर आया था, "सना" था। वह यमन देश की राजधानी थी। उसने जादू के घोड़े को अपने देश की ओर मोड़ दिया। सीधा चलता गया। वह, अन्धकार होने के बाद अपने पिता के घर के ऊपर उतरा।

जब से अम्मार चला गया था तब से साबर बादशाह और उसका परिवार दुःख में डूबा हुआ था। जब बादशाह ने अपने लड़के को



सीढ़ियों पर से उतरते देखा तो उसे लगा जैसे उसे कोई भ्रम हो गया हो। उसने अपने लड़के को गले लगाया। वह काँप-सा गया। उसकी तीनों बहनों ने आनन्दाश्रु बहाये। उनको ऐसा लगा जैसे कोई मृत व्यक्ति पुनर्जीवित हो गया हो।

अम्मार ने जब अपनी कहानी सुनाई तो बादशाह ने सैनिकों को आज्ञा दी-"कल नगर को सजाकर उत्सव मनाओ। एक सप्ताह तक दावतें और मनोरञ्जन करो।" अगले दिन सबको जेल से छोड़ दिया गया। राज्य के खर्च पर बड़ी बड़ी दावतें दी गई।

खुशियाँ मनाई गई। लोगों को यह बताने के लिए कि राजकुमार वापस आ गया है, उसका जलूस निकाला गया।

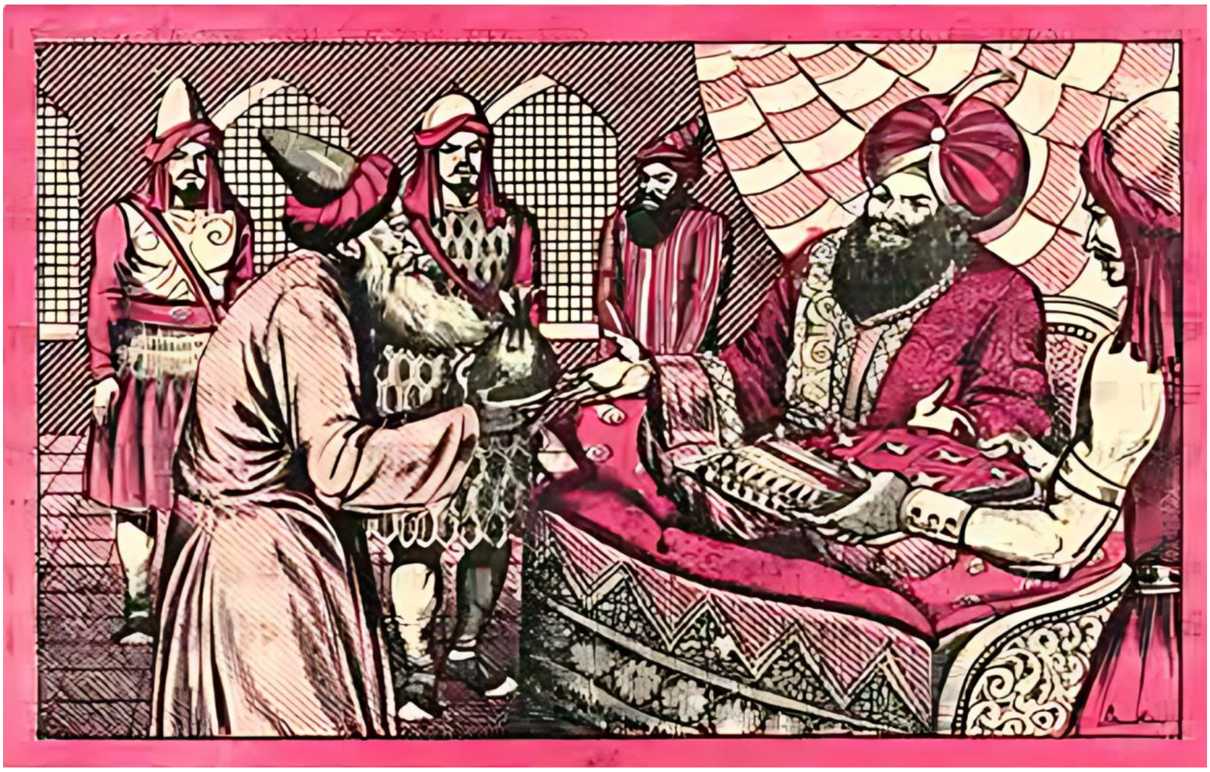
जलूस के बाद अम्मार ने अपने पिता से पूछा-"जादू का घोड़ा देनेवाला सिद्ध कहाँ है?"

"उसे एक काली कोठरी में डाल दिया है। उस पर अल्लाह भी रहम न करे। जब और कैदियों को छोड़ा गया तो उसको नहीं छोड़ा गया।" बादशाह ने कहा।

अम्मार ने उस सिद्ध को भी छोड़ने के लिए कहा। बादशाह ने उस बूढ़े को कैद से छुड़ा दिया। उसे सामने बुलाकर, उस पर शाल ओढ़कर उसको बहुत सा धन ईनाम में दिया।

न राजा ने बूढ़े की राजकुमारी के साथ विवाह के बारे में बात छेड़ी, न सिद्ध ने ही। परन्तु सिद्ध अन्दर ही अन्दर जल रहा था। उसे अब पता लगा कि राजकुमार को घोड़ा देकर उसने गलती की थी। उस लड़के ने उसका भेद जान ही लिया होगा।

बादशाह के लिए तो वह घोड़ा एक दुःस्वप्न-सा था। उसने अपने लड़के से कहा-"बेटा, अल्लाह की मेहरबानी से



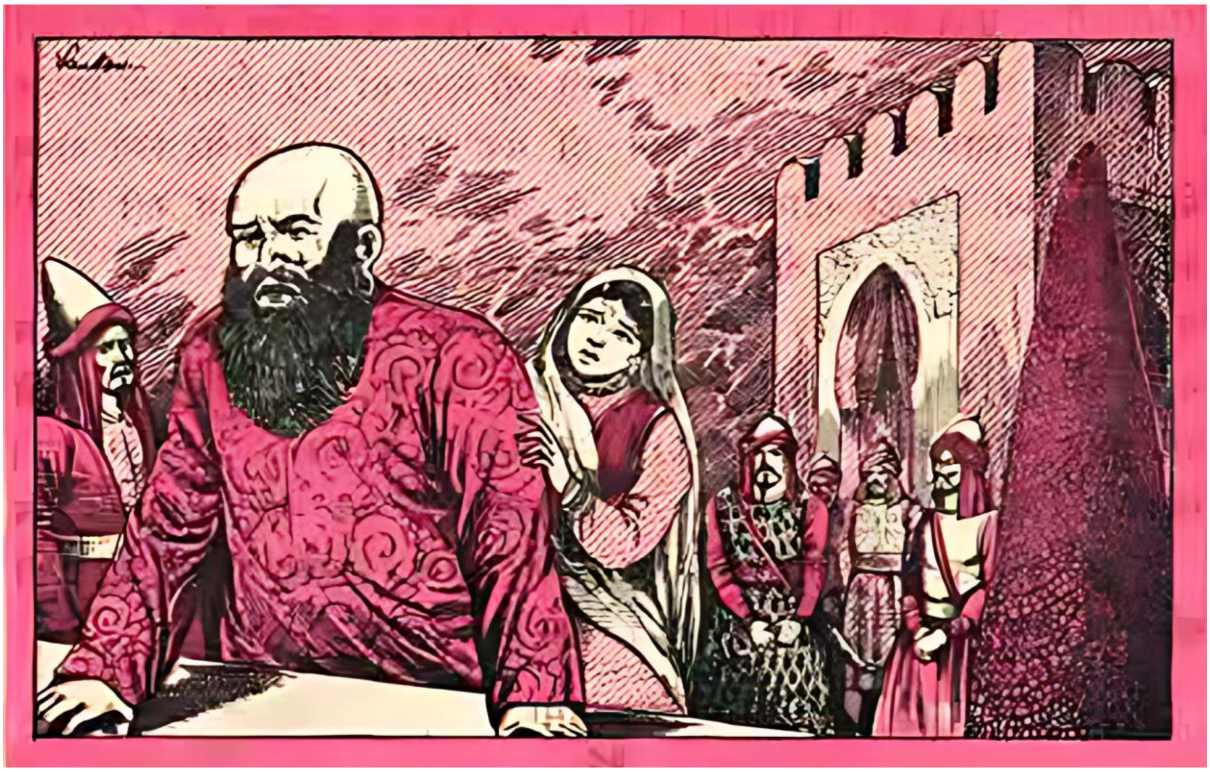
तुम वापस आ गये हो। फिर कभी उस मनहूस घोड़े के पास न जाना। वह बहुत रहस्यों वाला घोड़ा है। शायद तुम उसके आधे भेद भी नहीं जानते हो।

अम्मार घर वापस तो आ गया था पर सना नगर की राजकुमारी नहर उसकी आखों से दूर न होती थी। सप्ताह भर वह दावतों व मनोरञ्जन में समय बिताता रहा। फिर भी वह क्षण भरके लिए भी उसे न भूल सका।

आखिर, उसको उसे फिर देखने की मर्जी हुई। पिता को बिना बताये वह अपने महल की छत पर गया, जादू के घोड़े पर चढ़कर यमन देश की ओर निकल गया। जब बादशाह को मालूम हुआ कि वह चला गया था तो उसने छत पर जादू के घोड़े को खोजा। जब वह वहाँ न मिला, तो उसका दिल बैठ गया।

"इकलौता है, और जाने यह घोड़ा कहाँ से आ मरा है। मैंने तब ही क्यों न उसके टुकड़े टुकड़े कर दिये थे!" वह मन ही मन सोचने लगा।

बहुत रात होने के बाद अम्मार सना नगर के राजमहल पर पहले की तरह





मण्डराया। पहले की तरह ही वह राजकुमारी के शयन कक्ष के पास गया तो परदे के पीछे से उसको ये बातें सुनाई दीं।

"इस धोखेबाज के लिए कितने दिन यों खाना-पीना छोड़कर रहोगी? अगर वह तुम्हारे लिए रो रहा हो तो बात कुछ समझ में भी आती है। जब ऐसी बात नहीं है तो तुम क्यों रोती हो? हमारी बात सुन भोजन करो। मजे से रहो।" सहेलियों ने राजकुमारी को समझाया।

"तुम सब झूठ कह रही हो। वह मुझे एक क्षण भी नहीं भुला सकता। जैसा मेरा प्रेम है वैसा ही उसका प्रेम है।" राजकुमारी घुट घुट कर रो रही थी।

ठीक उसी समय परदा हटाकर अम्मार ने कमरे में कदम रखा। राजकुमारी की सहेलियाँ आश्चर्य में पड़ गई। राजकुमारी का मुँह खिल-सा गया। "तुम्हारे लिए कितनी रोती रही, तुम मुझे क्यों यों छोड़कर चले गये थे? अगर तुम एक और दिन देरी करके आते तो मेरा शव देखते।" उसने अम्मार से कहा।

"मैं क्या करूँ? तुमने देखा न तुम्हारे पिता ने कैसा मेरा अपमान किया था। तुम्हारा पिता था इसलिए छोड़ दिया। नहीं तो उसी समय वह मेरी तलवार का शिकार हो गया होता। पहले मेरे लिये भोजन ले आओ। मुझे भूख लग रही है।" अम्मार ने कहा।

सहेलियाँ जाकर दो के लिए भोजन ले आई। पेट भर खाने के बाद अम्मार ने अपनी प्रेयसी से कहा-"तू घबरा मत। मैं सप्ताह में एक बार आकर तुझे देख जाया करूँगा। सवेरा होने से पहले ही मुझे उठकर जाना होगा।"

"बाप रे बाप। अब में तुम्हें अकेली न जाने दूँगी। मुझे भी अपने देश ले जाओ।" राजकुमारी नहर ने कहा।

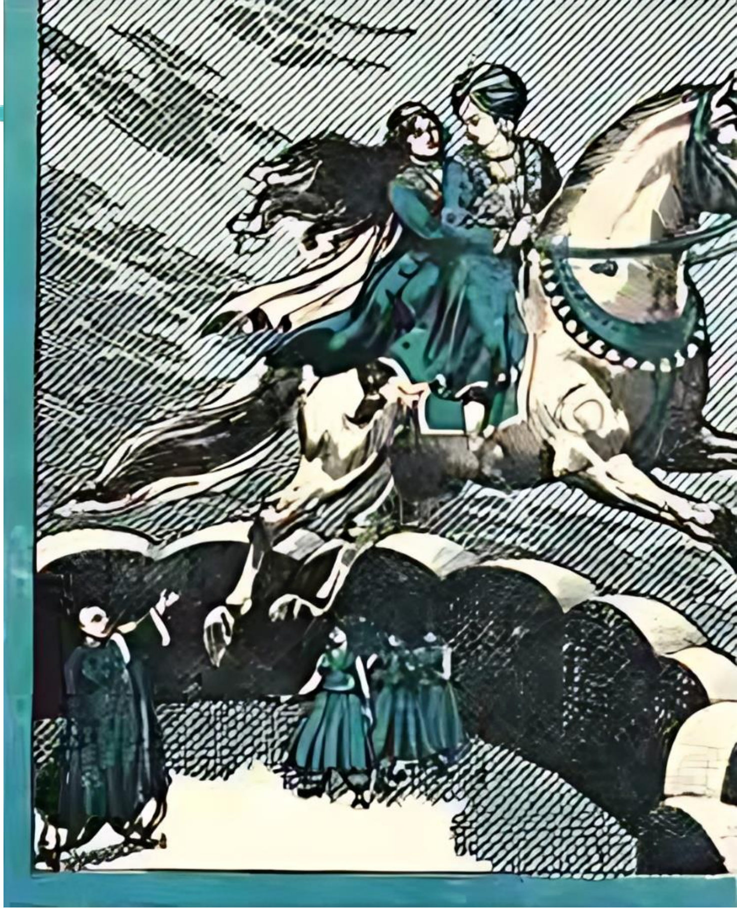
"मेरे लिये क्या तुम अपना देश, माँ-बाप छोड़कर रह सकोगी?" अम्मार ने पूछा।

"उनकी मुझे परवाह नहीं है। मैं तेरे लिये सब छोड़ दूँगी।" राजकुमारी ने झट उत्तर दिया।

सवेरा होने के समय वह छत पर गया। राजकुमारी अपने सब गहने पहन कर, अच्छे कपड़े पहने अपनी सहेलियों के साथ छत पर आई।

अम्मार जादू के घोड़े पर चढ़ गया। अपने पीछे उसने राजकुमारी को चढ़ा लिया। फिर उसने दोनों की कमर एक साड़ी से बाँध दी। उसके बाद कील दबाते ही घोड़ा उड़ने लगा। तब तक राजकुमारी की सहेलियों चुप थी। पर जब जादू का घोड़ा राजकुमारी को लेकर उड़ा तो जोर जोर से रोने धोने लगीं। उनका रोना सुन राजा और रानी भागे भागे छत पर आये।

राजा ने अम्मार से कहा-"बेटा, हम पर दया करो। हमें हमारी लड़की से अलग न करो।"



अम्मार ने राजकुमारी से पूछा-"क्या कहती हो? तुम्हारे माता पिता तुम्हारे लिए रो रहे हैं। क्या वापस चले चलें? बताओ।"

अगर तुम हो तो वे ही नहीं मुझे संसार में और कुछ नहीं चाहिये।" राजकुमारी ने कहा।

यह सुन राजकुमार बड़ा खुश हुआ। वह नदी नाले के पास हरियाली पर विश्राम करता अगले दिन सवेरे अपने शहर गया। परन्तु वह जादू के घोड़े को सीधे अपने घर न ले गया। नगर के बाहर

राजधानी के उद्यान में उसे उतारा। वह चाहता था कि उसकी भावी पत्नी जलूस के साथ नगर में प्रवेश करे।

उद्यान के बीच में एक सुन्दर भवन था। अम्मार ने अपनी प्रियतमा को वहाँ लाकर बिठाया। उससे कहा- "मैं अभी जाकर अपने पिता से कहकर आता हूँ कि तू आई हुई है। जादू के घोड़े को यहीं छोड़ कर जा रहा हूँ। उसे जरा सावधानी से देखना। जब तेरे लिए खबर आये तब तू अपने महल में आ जाना।"

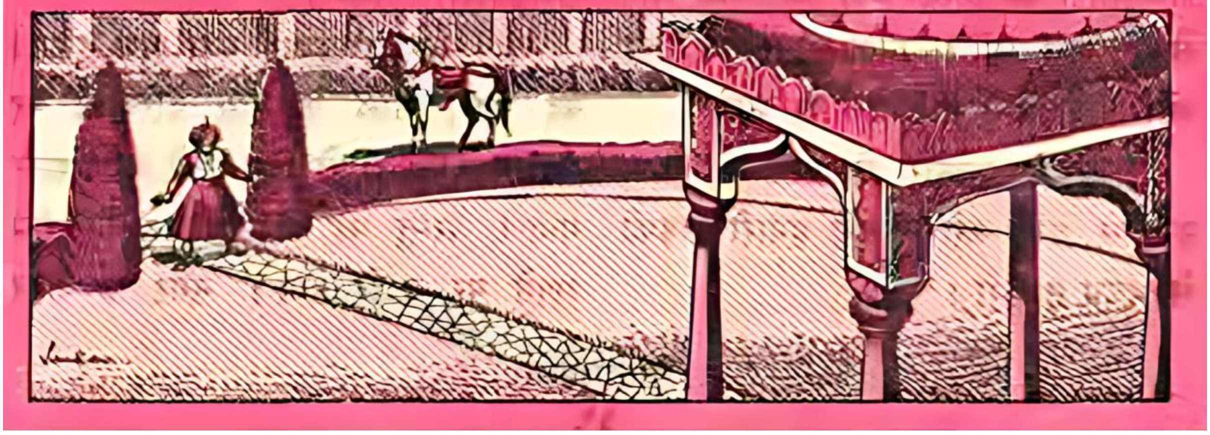
फिर वह एक मामूली घोड़े पर चढ़कर अपने घर गया। उसको देखते ही बादशाह को बहुत खुशी हुई।

"पिता जी, मेरे साथ सना की राजकुमारी आई है। उतनी सुन्दर स्त्री, फारस या अरब देश में नहीं है। उसको जलूस के साथ लाने का प्रबन्ध करवाइये।" अम्मार ने कहा।

बादशाह ने एक शानदार जलूस का प्रबन्ध किया और उसके साथ स्वयं भी निकला। जलूस के साथ हर तरह के वाद्य थे। अम्मार ने एक राजसिंहासन को तरह तरह से सजाया। उसके चारों और गुलाम थे। उसने भी अपने सबसे अच्छे कपड़े पहने।

परन्तु वह जलूस के साथ नहीं गया। जलूस के उद्यान तक पहुँचने में बहुत देर लगती। इसलिए वह एक तेज घोड़े पर चढ़कर पगडण्डी से उद्यान पहुँच गया। उसने वहाँ देखा कि मण्डप खाली था । वहाँ राजकुमारी नहर न थी। मण्डप के बाहर जादू का घोड़ा भी न था। अम्मार का हृदय रुक सा गया।

(अभी और है)



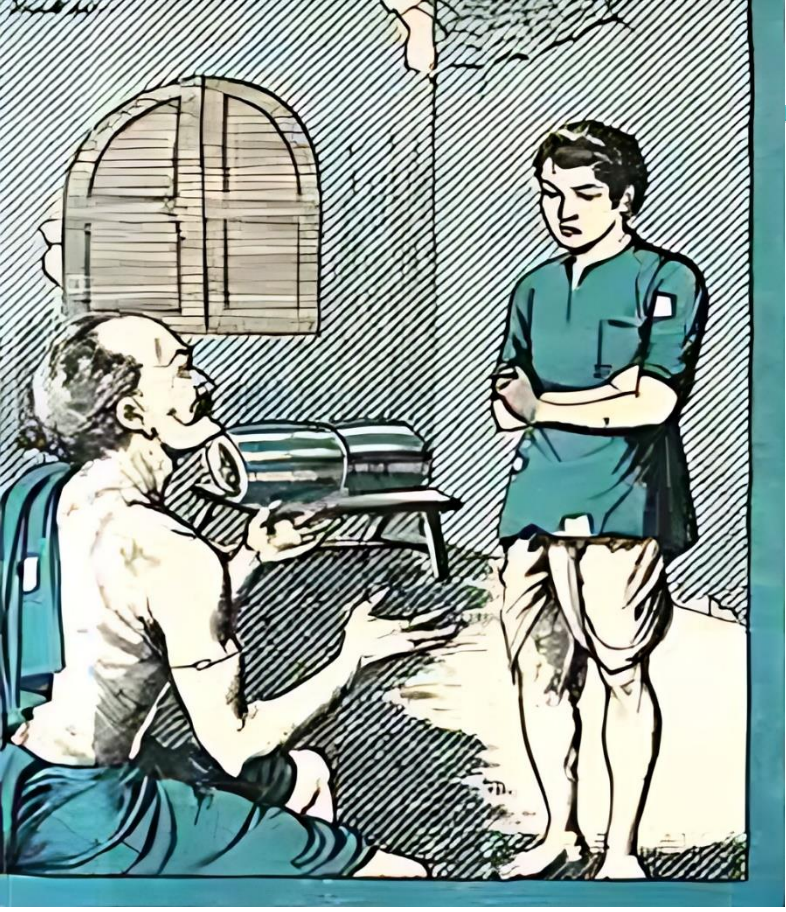


प्रस्तरपुर नाम के गाँव में वीरसिंह नाम का एक लालाची रहा करता था। उसके पास अपनी सेन्ट-भर जमीन न थी। पर पत्नी की सम्पत्ति उसके हाथ आई। थोड़ा पैसा यदि उस पर लगाया जाता तो उस ज़मीन से अच्छी आमदनी हो सकती थी। क्योंकि वीरसिंह बहुत लोभी था इसलिए वह रुपया खर्च न किया करता था। पास एक अच्छा घर भी था। पर ठीक तरह उसकी देख-भाल न होती। मरम्मत भी न की जाती। होते-होते मकान उजड़-सा गया मानों भूतों का घर हो। सालों से खपरैल ठीक न की गई थी- इसलिए जगह-जगह छत चूती। घर के पास बहुत बड़ी जगह थी। पर क्योंकि उसके चारों ओर दीवार न थी इसलिए शहर के सूअर, गधे, जानवर, सभी वहीं घूमा करते। अगर कभी कुछ वहाँ बोया भी जाता तो वे उसे नष्ट कर देते।

वीरसिंह के पास रामलाल नाम का एक नौकर था। उसने अपने मालिक से कई बार कहा-"जरा उस जगह को ठीक करवा दीजिए। सैकड़ों रुपयों की सब्जी पैदा की जा सकती है।"

तब वीरसिंह ने कहा-"मुझसे दस रुपये खर्च करवाओगे और तीन रुपये की आमदनी भी न होगी। अगर सब्जियाँ न हो तो क्या गुजारा ने होगा?"

वीरसिंह केवल लालची ही न था। कञ्जूस भी था। जितनी आमदनी होती उसे बचाकर रख लेता। देखते-देखते पैसा न खर्चता। वह खुद तो पुराना पहनता ही, पत्नी को भी कुछ पहनने को न देता।



बीरसिंह के दो लड़के और दो लड़कियाँ थीं। सब सुन्दर और अक्लमन्द थे। बड़ा लड़का रमण अच्छी तरह पढ़-लिख गया था। उसने वैद्यक सीखनी चाही पर बीरसिंह ने यह न होने दिया। फिर उसने खेती करनी चाही, पर पिता ने खेती के उपकरणों के लिए उसे पैसे न दिये। उसे जीवन से ही वैराग्य हो गया और यह एक दिन बिना किसी को कहे कहीं चला गया।

रमण के बाद लड़की थी, उसका नाम था सीता। वह बहुत सुन्दर थी। पहनने को चीथड़े ही थे, हाथों में चूड़ियाँ भी न थी, हमेशा मैले कपड़े पहनती। फिर भी उसका सौन्दर्य कम न होता। शादी के लायक हो गई थी। पर हालत वही थी जो चन्दामामा की बादलों की आड़ में होती है। उसके बाद रुक्मणी नाम की लड़की थी। उसको सङ्गीत का शौक था। परन्तु वीरसिंह उसको सङ्गीत सिखाने के लिए नहीं माना।

गोपी सबसे छोटा था। अभी यह गलियों में ही फिरा करता था।

वीरसिंह की पत्नी बहुत योग्य थी। वह जैसे-तैसे उसके साथ दिन काट रही थी। और कोई होती तो किसी कुँए-खड्ड में गिरकर मर जाती। उसकी सहन शक्ति असाधारण थी। घर के खर्च के लिए रखा मक्खन-घी बेचकर जो पैसा मिलता उससे वह बच्चों के लिए मिठाई बनाती, लड़कियों के लिए कपड़े लते खरीदती।

वीरसिंह के परिवार का यदि कोई मर्द सहारा था तो वह रामलाल था। वह अक्लमन्द और योग्य था। कहीं और जाकर भी वह आराम से रह सकता था। परन्तु वह वीरसिंह की पत्नी और

बच्चों को देखकर वहीं रह जाता था। वह जानता था कि यदि वह वहाँ न रहा तो उनकी हालत कुत्तों की सी भी न रहेगी। यही नहीं उसको सीता से प्रेम था। सीता भी, लगता था, उसको बहुत चाहती थी।

यद्यपि वीरसिंह में अपनी जमीन सुधार कर कमाने की अक्ल न थी तो भी दूसरों का धन हथियाने में वह बहुत होशियार था। एक साल नदी में बाढ़ आई। पासवाला गाँव जब उसमें बहा जा रहा था तो वीरसिंह वहाँ जाकर बाढ़ में बहते सामान को, मुरगी, बकरियों को पकड़कर ले आया था। उन गन्दे कामों के लिए वह रामलाल को भी साथ ले जाता। उसे मालिक का कहना मानना पड़ता।

एक दिन वीरसिंह ने रामलाल से कहा-"जरा सीढ़ी ले आ। मन्दिर जाना है।"

रामलाल ने आश्चर्य से पूछा-"मन्दिर के लिए सीढ़ी क्यों?"

"ध्वजस्तम्भ पर एक बड़ा शहद का छता लगा है। पन्द्रह सेर शहद कम से कम होगा। क्यों जाने दिया जाय?" वीरसिंह ने कहा।



"वह भगवान की चीज़ है। हमें नहीं लेना चाहिए।" रामलाल ने कहा।

"भगवान की सम्पत्ति हमारी सम्पत्ति है। वह मन्दिर जिस जगह पर है वह जगह किसकी है? वह हमारे ससुर के परदादे की है। बकवास न कर। सीढ़ी ले आ।" वीरसिंह ने कहा।

दोनों सीढ़ी लेकर मन्दिर गये। वीरसिंह ने कन्धे पर से कम्बल उतारकर, रामलाल को देते हुए कहा-"इसे ओढ़कर चढ़ो, मक्खियों को भगा दो। इस चाकू से छत्ता काटकर ले आना।"



"मैं नहीं चढ़ सकता। सीढ़ी भी पुरानी है।" रामलाल ने कहा।

"जा, सिवाय खाने के और कुछ नहीं आता जाता। देख में चढ़कर दिखाता हूँ।" कहकर वीरसिंह कम्बल ओढ़कर सीढ़ी पर चढ़ा। वह ज्योंहि छत्ते के पास पहुँचा त्योंहि मक्खियाँ उड़ीं और मेघ की तरह उन्होंने उसको घेर लिया।

वीरसिंह बहुत सावधान था। फिर भी मक्खियाँ कम्बल में घुस गई और उसके मुखपर उन्होंने खूब काटा। वह उतरने को था कि नीचे जा गिरा। वीरसिंह का सिर फर्श पर लगा। जबर्दस्त चोट लगी। खून बहने लगा। रामलाल ने सोचा कि वह मर गया था। फिर भी यह उसको उसी तरह उठाकर घर ले गया और उसके पलङ्ग पर लिटा दिया।

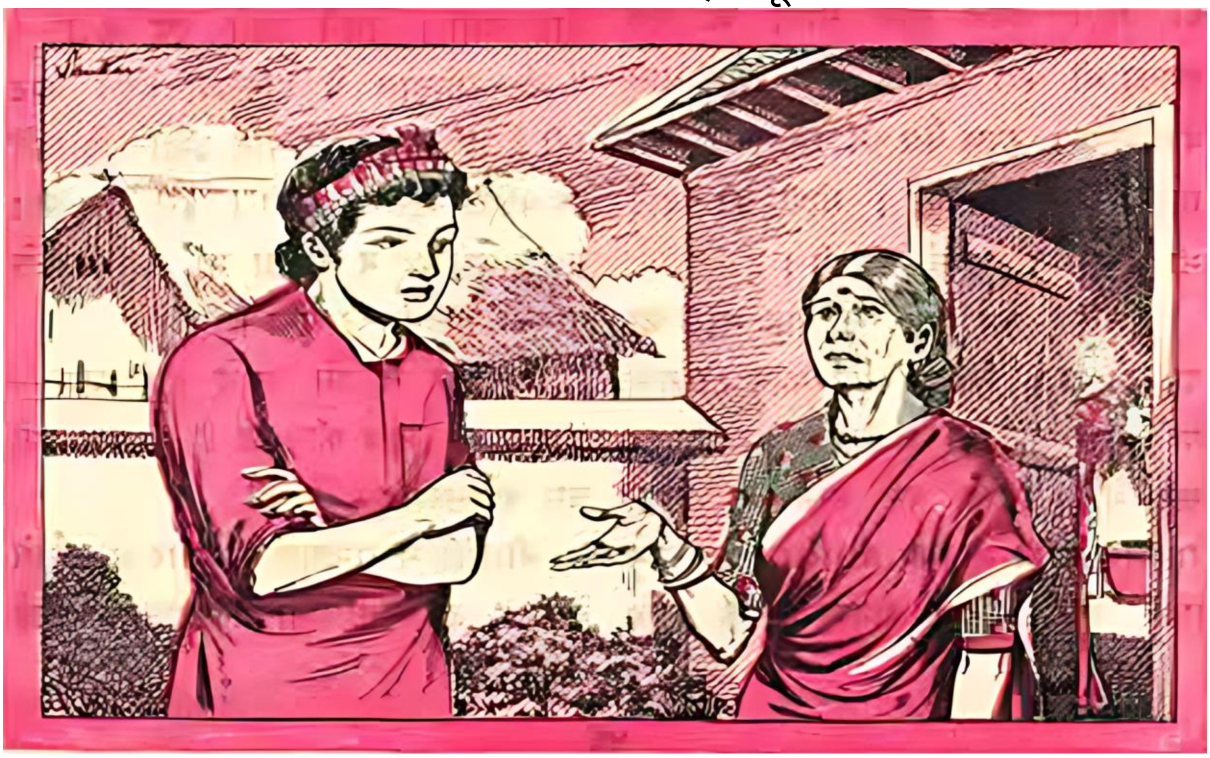
वीरसिंह मरा न था। वैद्य ने आकर पट्टी बाँधी। दो सप्ताह में घाव भरा। परन्तु बीरसिंह का दिमाग बुरी तरह बिगड़ गया। मुख से बात न निकलती। किसी को पहचान न पाता। केवल रामलाल को देखकर वह डर सा जाता। रामलाल जो कहता, वह करता।

घर का कामकाज रामलाल के हाथ आ गया। उसे मालूम हुआ कि वीरसिंह का लड़का रमण शहर आया हुआ था। उसने उसको घर बुलाकर कहा-"बाबू! अगर तुम बैद्यक सीखना चाहो तो सीखो। अब तुम्हें कोई रोकने-टोकनेवाला नहीं है।"

वीरसिंह का सालों से जमा किया हुआ धन जब रामलाल के हाथ आया तो उसने पहले मैदान के चारों ओर मेंढ़ लगाई, जमीन ठीक करवाई और उसने वहाँ शाक-सब्जी पैदा की।

खेतों में खाद डलवाया। घर में सफ़ेदी करवाई। खपरैल भी बदलवाई। टूटे हुए दरवाजे और खिड़कियों की भी मरम्मत करवाई। इतने दिनों बाद वीरसिंह का घर घर-सा मालूम होता था। पशुओं और मुर्गियों के लिए भी रहने का स्थान बनाया गया। कोई खाली न बैठ सकता था, उसने घरमें सबसे काम करवाया। सबसे अधिक वह खुद काम करता। आखिर वीरसिंह ने भी काम किया। रामलाल के कहने भर की देरी होती और वीरसिंह कठिन से कठिन काम कर देता।

जितनी पूञ्जी रामलाल ने लगाई थी, वह दो वर्ष में वापस आ गई। आमदनी अधिक हो गई। अब सबके शरीर पर अच्छे कपड़े थे। लड़कियों के लिए गहने भी आ गये थे। इतने दिनों बाद वे किसी अच्छे घराने की लगती थीं। रुक्मणी सङ्गीत सीखने लगी। बीरसिंह की पत्नी ने अपनी बड़ी लड़की के मन की बात जानकर कहा-"बेटा, रामलाल! सीता की शादी के बारे में क्या सोचा है? अट्ठारह साल पूरे हो रहे हैं। और कहाँ खोजें? मैं तुम दोनों की ही गाण्ठ बन्धवा देना चाहती हूँ।"





रामलाल मान गया। दोनों की शादी हो गई। अगले साल सीता का एक लड़का भी पैदा हुआ। एक और साल बीत गया। रमण वैद्य बन गया। रुक्मणी गाने में प्रवीण हो गई। गोपी की पढ़ाई भी अच्छी तरह चल रही थी।

वीरसिंह चार साल से बात नहीं कर पा रहा था। खेत में सब काम हो गया था। पर खलिहान में पुआल के ढेर रह गये थे। उनको घर लाने के लिए, रामलाल गाड़ी जोतकर वीरसिंह को साथ लेकर खेत गया। रामलाल के साथ वीरसिंह ने भी पुआल के गठर गाड़ी में डाले। आखिरी बार जब वे घर पहुँच रहे थे तो सूर्यास्त हो गया। थोड़ा पुआल रह गया था। रामलाल ने उसको खेत में छोड़ना न चाहा। उसे भी गाड़ी पर ऊँचा लाद दिया और उस पर वीरसिंह को बिठा दिया और वह गाड़ी हाँकता घर आ रहा था।

दुर्भाग्यवश, गाड़ी एक पत्थर पर चढ़ी और एक तरफ झुकी। बीरसिंह ऊपर से सिर के बल गिरा। यह देख रामलाल ने गाड़ी रोकी और भागा भागा वहाँ गया जहाँ वीरसिंह गिरा था।

इस बार भी वीरसिंह के सिर पर ही चोट लगी। उसने उठते हुए कहा- "अरे रामलाल ये मक्खियों बहुत काट रही हैं।" चार साल बाद उन्होंने ये बातें ही पहले पहल कही थीं। इस बीच क्या गुजरा था, वह न जानता था, वह फिर से मामूली आदमी हो गया।

रामलाल ने उसे उठाते हुए कहा- "क्या यह आज की बात है ? क्या उसे चार वर्ष नहीं हुए. हैं?"

वीरसिंह ने रामलाल की ओर आश्चर्य से देखा। उसे ऐसा लगा जैसे रामलाल कोई



बेतुकी बातें कर रहा हो। परन्तु तुरन्त आसपास की जगह देखकर वह जान गया कि वह ही गलती कर रहा था क्योंकि वहाँ न कोई मन्दिर था, न ध्वजस्तम्भ, न कम्बल, न सीढ़ी ही थी। उसके सामने पुआल से भरी गाड़ी थी। चारों ओर खेत थे। उसने रामलाल की ओर गौर से देखते हुए कहा-"अरे रामलाल, तू बहुत बदल गया है।"

"चार सालों में क्या नहीं बदलूँगा?" रामलाल ने कहा।

ये चार साल क्या थे यह वीरसिंह बहुत कोशिश करने पर जान न पाया था। उसने गाड़ी को देखकर पूछा-"यह गाड़ी किसकी है?"

"हमारी।" रामलाल ने कहा।

"हमारे पास तो गाड़ी नहीं थी न?" वीरसिंह ने पूछा।

"इसीलिए खरीदी है। बिना गाड़ी के क्या खेतीबाड़ी? पुआल को घर कैसे पहुँचाये जाये?" रामलाल ने कहा।

"पुआल क्या हमारे लिए है? कहाँ खरीदा है?" बीरसिंह ने पूछा।

"हमारे खेत से है।" रामलाल ने कहा।

ज्यों ज्यों वह प्रश्न पूछता जाता वीरसिंह को कई बातें मालूम होती जातीं, जिनसे वह डरता था। इसलिए वह बिना कुछ बोले गाड़ी में आगे बैठ गया।

गाड़ी जब घर के पास आई तो वीरसिंह ने पूछा-"यह घर किसका है?"

"हमारा ही।" रामलाल ने कहा।

"घर में कोई बहुत अच्छा गा रही है। हमारे घर में भला गानेवाली कौन है?" बीरसिंह ने पूछा।

"रुक्मणी तीन साल से वह सङ्गीत सीख रही है।" रामलाल ने कहा। इतने में सीता लड़के को उठाकर बाहर लाई।

"यह कोई बड़े घर की लड़की मालूम होती है। कौन है ये?" वीरसिंह ने अपनी बड़ी लड़की को बिना पहचाने पूछा।

"आपकी लड़की सीता।" रामलाल ने कहा।

"सीता! छी:। वह तो लड़के को उठाये हुए हैं। वह सीता कैसे होगी?" उसने पूछा।

"हाँ, बताना भूल गया। मेरी और सीता की दो साल पहले शादी हुई थी। वह आपका पोता है।"

वीरसिंह को थोड़ा थोड़ा समझ में आने लगा। पहले तो यह परिवर्तन उसे जँचा नहीं। घर का ठीक दिखाई देना, बच्चों का कीमती कपड़े पहनना, घर में गाय भैंस का होना, यह सब उसे अच्छा तो लगा, पर वह सोचने लगा, न जाने इसके लिए इन्होंने कितना खर्च किया होगा।

"एक पैसा भी कर्ज नहीं लिया। घर के पिछवाड़े में मानों सोने की फसल होती है। खेत में आमदनी हो रही है। बड़ा लड़का वैद्य है। सब आमदनी ही आमदनी है। सबको पेट भर खाने को है। पहनने के लिए कपड़े हैं। मैंने पहले ही कहा था कि सब इस तरह आराम से जी सकते हैं। पर आपने कभी मेरी सुनी नहीं। सब कुछ था। पर भाग्य न था। इसलिए बच्चे अभागे, भूखे नङ्गे पड़े रहते थे। अब सब बदल गया है।" रामलाल ने कहा।

वीरसिंह कुछ न बोला। पहले की तरह वह पत्नी और बाल बच्चों पर धौंस जमाने का साहस न कर सका। सब अच्छी तरह जी रहे थे। इसलिए सब उसको बड़े घराने के लगते थे। उसने घर का काम रामलाल के जिम्मे ही रखा।





[१४]

[रूपधर का लड़का धीरमति, अपने पिता के बारे में जानने के लिए पैलास गया। वह बापस रास्ते में, जहाँ उसके शत्रु उसे मारने की सोच रहे थे, बचकर सूअरों के रखवाले के पास गया। वह अपने पिता से मिला। बाप बेटे ने शत्रुओं का नाश करने के लिए एक चाल सोची। पिता ने धोरमति को यह भी बताया कि उसे क्या करना चाहिये था।]

सवेरे होते ही धीरमति उठकर नगर की ओर चल पड़ा। उसने सूअरों के रखवाले से कहा-"चाचा, अब मुझे घर जाना है। जब तक माँ मुझे अपने आँखों से न देख लेगी तब तक चैन न लेगी और इस बूढ़े को तो घूमने की आदत है। यहाँ घर में बैठे बैठे कैसे उसका समय कटेगा, इसलिए उसे शहर में छोड़ देना। जब कभी भूख लगेगी तो गली में भीख माँग कर पेट भर लेगा।"

"हाँ, बेटा, अगर मुझे यहाँ रहने के लिए भी कहा गया तो भी न रहूँगा। भीख माँगनेवाले के लिए सभी घर उसके हैं। तुम जाओ। थोड़ी देर और आग सेककर, धूप निकलने के बाद इसको साथ लेकर नगर आऊँगा। मेरे बदन पर के कपड़े तो देखो। चीथड़े चीथड़े हो गये हैं। इसलिए



सरदी सह नहीं पाता हूँ। रूपधर ने धीरमति से काँपती हुई आवाज में कहा।

धीरमति बहुत तेजी से घर चला गया। वह उस युद्ध के बारे में सोच रहा था जो वह और उसका पिता उसके घर में धरना दिये हुए लोगों से करने जा रहे थे। घर पहुँचते ही वह अपना भाला खम्भे के सहारे रखकर धीमे धीमे कदम रखता अन्दर गया। घर की दासियाँ उसे देख कर बहुत खुश हुई।

इतने में पद्ममुखी दुमञ्जले से उतरकर आई। लड़के को गले लगाकर उसने कहा-"आ गये बेटा! में न जानती थी कि फिर तुझे अपने आँखों देख सकूँगी। तुम अपने पिता के बारे में जानने के लिए मुझे बिना बताये ही पैलास गये थे। बताओ, क्या खबर लाये?"

"माँ, यह बात सच है कि में मौत से बाल बाल बचकर आया हूँ। परन्तु अब हाथ पैर हाथ धरकर बैठने का समय नहीं है। तुम अच्छी तरह नहा धोकर देवता से प्रार्थना करो कि हम अपना बदला ले सकें। मैं इस बीच जरा शहर होकर आता हूँ। दो, पैलास से मेरे साथ एक अतिथि आया है। उसे ले आऊँगा।" धीरमति ने अपनी माँ से कहा।

यह अतिथि एक ज्ञानी था। पैलास से जब धीरमति जा रहा था तो उसने उसे अपनी नाव में चढ़ाने के लिए कहा था। और धीरमति जब सूअरों के रखवाले से मिलने चला गया था तो यह और नाविकों के साथ नगर आ गया था।

लड़के के कहने के अनुसार पद्ममुखी ने स्नान करके, शुद्ध वस्त्र धारण कर देवता से प्रार्थना की कि वह शत्रुओं के संहार को निर्विघ्न रूप से सम्पन्न करे। उसके पति और पुत्र की आकांक्षा सफल हो।



इस बीच धीरमति बाहर आया। भाला उठाकर अपने पालतू कुत्तों को साथ लेकर शान से शहर की ओर गया। उसके घर जमा हुए शत्रुओं ने उससे बहुत ही मीठे ढङ्ग से अनेक कुशल प्रश्न पूछे। पर उनके हृदयों में द्वेष की अग्नि जोर से प्रज्वलित हो रही थी।

धीरमति उनसे पीछा छुड़ाकर, आगे बढ़कर, वहाँ गया जहाँ उसके पिता के मित्र रहा करते थे। वहाँ बैठकर वह उनके कुशल प्रश्नों का उत्तर यथाक्रम देने लगा।

थोड़ी देर में नाविक उस अतिथि को साथ लेकर वहाँ आये। उसने धीरमति से कहा-"प्रताप ने जो तुम्हें ईनाम दिये थे, वे मेरे घर पड़े हैं। तुम अपनी दासियों को भेजकर उन्हें मँगा लो। घर भिजवा दो।"

"हमारे घर में तो हालत है कि न जाने कब कौन दुष्ट मेरा गला घोंटकर, मेरी सम्पत्ति छीन ले। वे शनि की तरह मेरे घर बैठे हैं। ये ईनाम भी मला उनके हाथ क्यों लगे? फिलहाल उनको अपने घर ही रहने दो। जब हमारे घर से ये शनि चले जायेंगे, तब तुम ही उन्हें हमारे घर पहुँचा देना।" धीरमति ने उससे कहा।

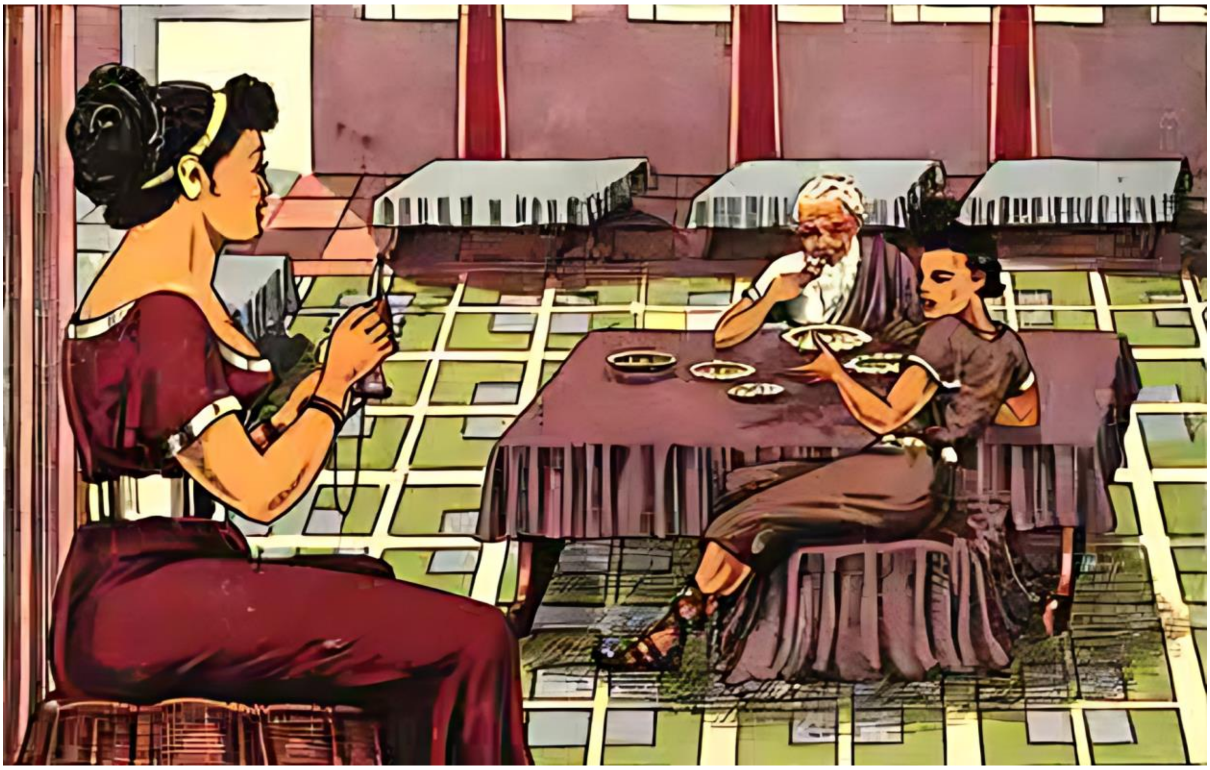
फिर वह अतिथि को अपने साथ घर ले गया। हॉल में सब आसनों पर कालीन बिछे हुए थे। दासियों ने अतिथि को स्नान कराया। कपड़े पहनाये और उनको श्रीरमति के साथ हॉल में भोजन परोसा। पद्ममुखी उनके सामने बैठकर महीन सूत कातने लगी।

भोजन समाप्त होने के बाद उसने अपने लड़के से कहा- "बेटा! इन दुष्टों के आने से पहले यह तो बताओ कि तुम

अपने पिता के बारे में क्या खबर लाये हो? कुछ मालूम हुआ?"

"सब बताऊँगा माँ! मैं पैलास जाकर नवद्योत से मिला। उन्होंने और उनके लड़कों ने हमारी बहुत आवभगत की। पर उनको पिताजी के बारे में कुछ न मालूम था। इसलिए मैं उनके एक लड़के को साथ लेकर प्रताप के देश में गया। मेरी कहानी सुनने के बाद प्रताप को इन दुष्टों पर बहुत गुस्सा आया। उन्होंने बताया कि पिताजी ने कहा है कि घर वापस आकर वे इन सब की बोटी-बोटी कटवा देंगे। प्रताप ने यह भी बताया कि समुद्रों में घूमनेवाले किसी बूढ़े ने उन्हें बताया था कि पिताजी को उसने किसी द्वीप में देखा था। इसके बाद मैं घर चला आया। इससे अधिक और कोई खबर नहीं है।" धीरमति ने कहा।

यह सुन अतिथि ने पद्ममुखी से कहा-"माँ, सुन, मैं सच बताता हूँ। तुम्हारा पति इस देश में पहुँच गया है। वह तुम्हारे घर में होनेवाले हथकण्डों से भी परिचित है। मेरी अन्तरात्मा कह रही हैं कि किसी दिन ये दुष्ट उसके हाथों मारे जायेंगे।"



"ऐसा ही हो। आप जो माँगेंगे वह दूँगी।" पद्ममुखी ने कहा।

जब ये तीनों अन्दर यो बातें कर रहे थे तो घर के बाहर के आङ्गन में वे दुष्ट मिलकर व्यायाम कर रहे थे। कई गोले दूर फेंक रहे थे। कई भाले निशाने पर मार रहे थे। इतने में उनके मुख्य नौकर ने आकर कहा-"दुपहर हो गई है। खेल ख़तम करके अब भोजन के लिए आइये। समय हो गया है।"

तुरन्त वे हॉल में गये और आसनों पर चित्त पड़ गये। जब उस दिन काटे गये बकरों को पकाया गया तब उन्होंने खाना शुरु किया।

इस बीच, सूअरों के रखवाले ने रूपधर से कहा-"तुझे मालिक ने शहर ले जाने के लिए कहा था न चलो, चलें। पहले ही काफी देरी हो गई है।"

रूपधर उससे एक डण्डा माँगकर उसे पकड़कर, कन्धे पर झोला डाले, सूअरों के रखवाले के साथ चल पड़ा। सूअरों का रखवाला आगे-आगे जा रहा था और रूपधर, भिखारी के बेष में, डण्डे पर अपना भार रखकर, अपने घर की ओर हाँफता हाँफता आया।





जब वे जल प्रपात के पास पहुँचे तो अच्छी-अच्छी भेड़ों और बकरियों को के हाँक कर ले जाता हुआ कालू नाम का एक आदमी वहाँ आया। उसने रूपधर को देखकर उसका मजाक उड़ाते हुए कहा- "कौन है, यह भिखारी? वो सूअरवाले, तुझे यह मुरदा कहाँ से मिल गया? मरे ये य भिखारी, लोगों को तङ्ग करके, उनकी जान हैरान करने के सिवाय कुछ नहीं जानते। अगर इसे रूपधर के घर ले गये तो वहाँ के बड़े आदमी इसका खातमा कर देंगे। छी! जा ये गधे।" उसने रूपधर को एक लात लगाई।

रूपधर को बड़ा गुस्सा आया। उसने एक चोट से उसका सिर तोड़ना चाहा। या उसे पत्थर फेंककर साँप की तरह मार देना चाहा। कुचल कुचल कर उसकी हड्डी पसली एक कर देनी चाही। परन्तु वह लहू का घूँट पीकर रह गया। सूअरों के रखवाले ने पूछा- "अबे, तुझे इतना घमण्ड कब से आ गया है? मालिक को आने दे, तेरे प्राण निकलवा दूँगा।"

"अब वे क्या आयेंगे? वे तो कभी मर गये। अच्छा हो यदि देवता धीरमति को भी ले जायें। नहीं तो इन बड़े आदमियों के हाथ वह जरूर मारा जायेगा।" कहकर कालू पशुओं को हाँकता घर की ओर गया। रूपधर के घर में जमा हुए दुष्टों की दावत के लिए ही वह उन पशुओं को हाँक कर ले जा रहा था।

उसके पीछे सूअरों का रखवाला और रूपधर भी पहुँचे। रूपधर ने अपना घर देखकर कहा-"यह घर हो न हो रूपधर

का है। इतना बड़ा घर और किसका होगा? अन्दर भोजन हो रहे हैं। सुगन्ध आ रही है।"

"सुगन्ध नहीं आयेगी और क्या आयेगी? पहले यह निर्णय करें कि हमें क्या करना है। पहले तुम जाते हो या मैं होकर आऊँ? अगर तुम इधर उधर देखते रहे तो कोई न कोई आकर तुम्हें भगा देगा। समझे?" सुअरों के रखवाले ने उससे कहा।

"तुम ही पहले हो आओ। मुझे कोई हर नहीं है कि मेरा कोई कुछ बिगाड़ सकेगा। भगवान ने मुझपर बहुत सी चोटें मारी हैं। एक और चोट लगेगी तो वह भी उनमें जा मिलेगी और क्या होगा?" रूपधर ने कहा।

वे जब इस प्रकार बातें कर रहे थे तो पासवाले कूड़े के ढेर पर लेटे एक कुत्ते ने कान उठाकर उसकी तरफ देखा। यह अच्छा शिकारी कुत्ता था। उसका नाम था 'कान्ति'। रूपधर ने उसे छुटपन से पाला था। वह जब बड़ा हुआ तो उसे युद्ध में जाना पड़ गया। अब कान्ति की



देखभाल करनेवाला कोई न था। शरीर पर खुजली निकल आई थी।

कूड़े के ढेर पर पड़ा पड़ा वह मौत की इन्तज़ार कर रहा था। मालिक को पहचान कर वह सहसा पूँछ हिलाने लगा। क्योंकि उसके शरीर में शक्ति नहीं रह गई थी इसलिए वह यहाँ से उठकर न आ सका।

उसको देखते ही रूपधर के आँखों से आँसू लुढ़क गये। उसने सूअरों के रखवाले की ओर मुड़कर कहा-"यह देखने में तो अच्छी नस्ल का कुत्ता मालूम होता है। इसकी यह क्या हालत हो रही है? शायद यह कोई

पालतू कुता ही हो! क्यों, क्या तुम जानते हो?"

"वाह! जब इसका मालिक जीता था तब देखनी थी इसकी शान। शिकार पर जाता तो और कुत्तों से बढ़कर, शिकार पकड़कर लाता। इसका मालिक कभी का कुत्ते की मौत मर गया और यहाँ यह उस जैसी मौत मर रहा है।" कहता सूअरों का रखवाला घर में घुस गया। "कान्ति" ने मालिक को देखते ही हमेशा के लिए आँख मूँद लीं, जैसे वह उसी क्षण की प्रतीक्षा में तबतक जीवित रहा हो।

सूअरों के रखवाले के अन्दर पैर रखते ही धीरमति ने उसको सिर हिलाकर आने का इशारा किया। सूअरों का रखवाला धीरमति के सामने जाकर बैठ गया। इस बीच रूपधर, लाठी टेकता टेकता, बड़े बूढ़े की तरह लड़खड़ाता लड़खड़ाता अन्दर आया और देहली के पास गिर गया। चोट लगते लगते बची।

धीरमति ने एक बड़ी रोटी और बहुत-सा शाक सूअरों के रखवाले को देते हुए कहा-"उसको दो। औरों से भी थोड़ा बहुत माँग लेने के लिए कहो।"

रूपधर ने सूअरों के रखवाले से मांस और रोटी लेते हुए कहा- "भगवान आपका भला करें। इनकी सब इच्छायें पूरी हो।" उसने आशीर्वाद दिया। उसे खाकर, वहाँ से उठकर, वह उस जगह गया जहाँ वे दुष्ट दावत हजम कर रहे थे। उन सब के सामने वह इस तरह भीख माँगने लगा, जैसे सचमुच कोई बूढ़ा भिखारी हो।

(अभी और है)





बहुत पहले सिंहपुर में विजयसिद्धि नाम का एक वीर रहा करता था। यद्यपि राजा के यहाँ उसने नौकरी न की थी तो भी वह राजा के निकट का एक व्यक्ति था और स्वतन्त्र रूप से जिया करता था।

युद्ध-क्षेत्र में शत्रु विजयसिद्धि को देखते ही पथरा से जाते। बड़ी उम्र में जब वह मामूली आदमी की तरह जी रहा था तब भी वह भयङ्कर लगता था। बच्चे उसको देखते ही जोर जोर से चिल्लाने लगते। बड़े भी उसको ठीक तरह देख न पाते थे। विजयसिद्धि की एक ही लड़की थी। उसका नाम बालाम्बा था। उसकी पत्नी कुछ दिन पहले गुज़र गई थी। तब से बालाम्बा ही एक स्त्री घर में रह गई थी। यह देखने में जितनी सुन्दर थी उतनी काम-काज करने में कुशल थी। पिता को किसी चीज की कमी न होने देती।

"जब तक बाला मेरी देखभाल करती रहेगी तब तक मुझे कोई फिक्र नहीं है।" यह विजयसिद्धि अक्सर कहा करता।

बालाम्बा से, हो सकता है, सिंहपुर में कई युवक विवाह करना चाहते थे। परन्तु कोई भी विजयसिद्धि से जाकर विवाह के विषय में न कह सकता था। फिर चूँकि वह विजयसिद्धि की हर तरह से देखभाल कर रही थी इसलिए लोग सन्देह भी करने लगे थे कि वह अपनी लड़की का विवाह ही नहीं करना चाहता था।

राजा की नौकरी में वीरभूपति नाम का एक युवक था। वह कभी कभी आकर विजयसिद्धि और बालाम्बा से स्नेहपूर्वक बातचीत किया करता। उसने भी न कहा कि वह उससे शादी करना चाहता था;

गायत्री चौधरी

पर दास दासियाँ सोचा करती कि उन दोनों की शादी हो सकती थी।

इस बीच, विजयसिद्धि का कोई दूर का सम्बन्धी उसके घर आया। उसका नाम इन्द्रवर्मा था। यह बिजयसिद्धि की सहायता से राजा के यहाँ नौकरी पाना चाहता था। विजयसिद्धि ने उसकी सहायता करने का वचन दिया और उसे अपने घर ही रख लिया।

इन्द्रवर्मा को, बाला को देखते ही उसके प्रति प्रेम हो गया। क्योंकि वह उसके घर ही रह रहा था और बाला ही क्योंकि उसकी जरूरतें पूरी किया करती थी इसलिए दोनों में कुछ घनिष्ठता बढ़ी। फिर भी इन्द्रवर्मा अपने मन की बात न कह पाता था। इसका कारण यह था कि विजयसिद्धि को देखते ही वह भय से काँप उठता था। उसने पहले दस दिनों में उसके घर में रहते हुये भी उससे मुश्किल से दो तीन बातें ही की थीं।

और वह यह भी न जानता था कि बाला को उस पर प्रेम था कि नहीं। क्योंकि वह अतिथि था, उम्र भी



बड़ी न थी इसलिए वह हिलमिलकर बातचीत कर सकता था। इन्द्रवर्मा को डर था कि यदि उसने कहा कि "मैं तुमसे प्रेम करता हूँ।" तो वह शायद बोलना ही बन्द कर दे। यही नहीं, इन्द्रवर्मा के रास्ते में बीरभूपति काँटे की तरह था। इन्द्रवर्मा, उसको घर में आता जाता, बाला से खुलकर बातचीत करता देख, ईर्ष्या से जल उठा। वह भी औरों की तरह सोचने लगा कि बीरमूपति और बाला की ही शादी होगी।

इन्द्रवर्मा के आये हुए अभी दो सप्ताह हुए थे कि विजयसिद्धि को बाहर जाना पड़ा।

बाला से बातचीत करने के लिए उसको इस प्रकार मौका एक मिला। बाला ने भी इस अवकाश का उपयोग किया। जो कोई काम वह करती इन्द्रवर्मा उसके पीछे पीछे चलता चलता इधर उधर की खबरें सुनाता। शाम को बगीचे में दोनों टहलने गये। मलिका की लता के नीचे रात को काफी देर तक दोनों गप्पें लगाते रहे। फिर दोनों अलग अलग सोने चले गये।

"मैं तुमसे प्रेम कर रहा हूँ। क्या मुझ से शादी करोगी?" यह बाला से पूछने के लिए उसको इससे अच्छा मौका नहीं मिल सकता था। फिर भी उसने यह बात न छेड़ी। अगर बाला यह कहती-"मैं तुमसे प्रेम नहीं करती हूँ।" तो उसको उसका घर छोड़कर जाना पड़ता। और कोई रास्ता न था। भाग भागकर दूध पीने की अपेक्षा एक जगह खड़े होकर पानी पीना ही अच्छा है। और दो तीन दिन तक विजयसिद्धि को वापस न आना था। आज की तरह वह और दिन भी उसके साथ घूम सकता था, गप्पें लगा सकता था।



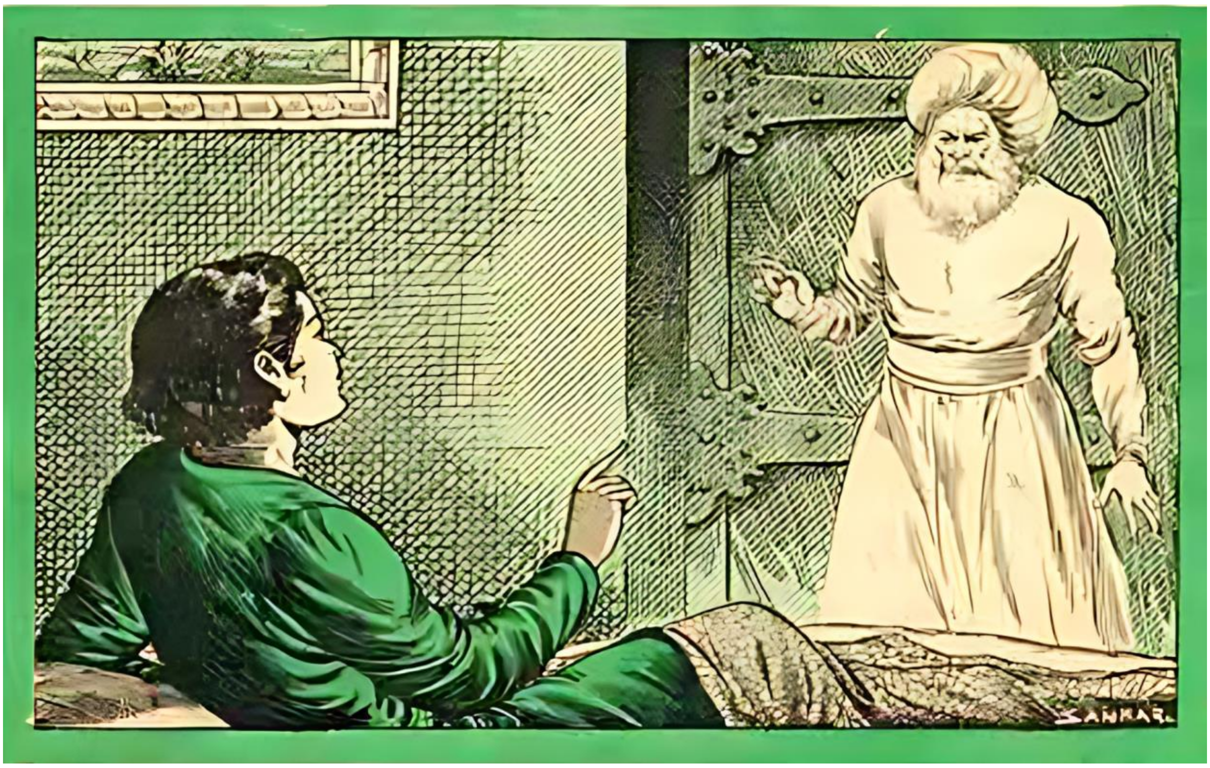
"प्रेम और विवाह के विषय में बातचीत करके यह आनन्द क्यों खोया जाय?" इन्द्रवर्मा ने सोचा।

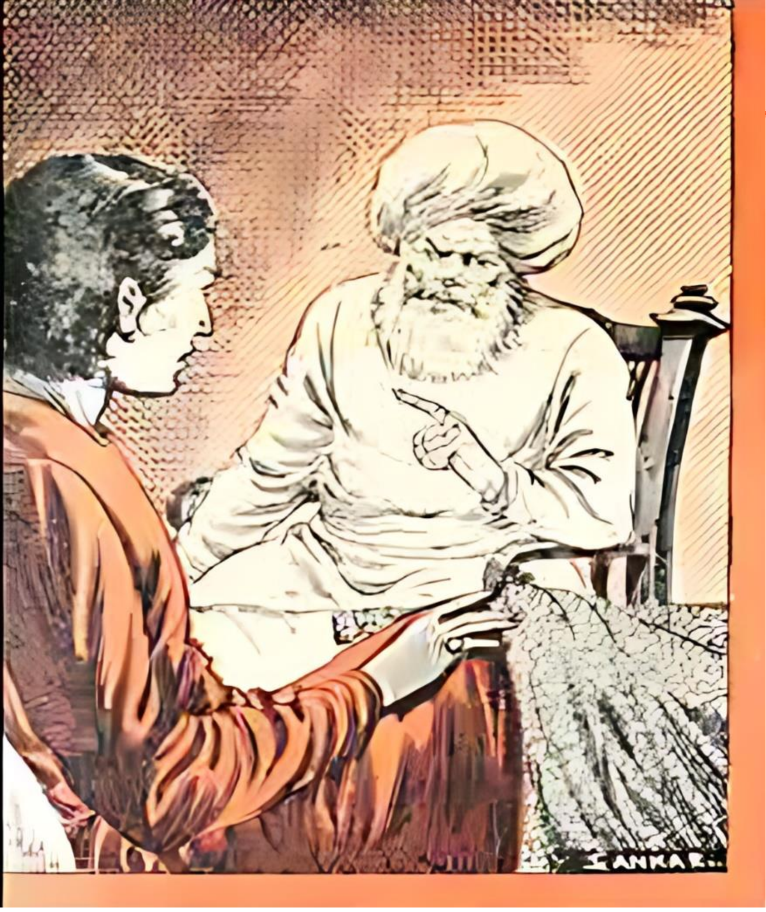
वह अपने कमरे में जाकर चटखनी लगाकर, बिस्तर पर बैठा ही था कि उसको विजयसिद्धि का कमरे में आना स्पष्ट दिखाई दिया। इन्द्रवर्मा को अचरज हुआ। उसने सोचा कि विजयसिद्धि तभी वापस आ गया था। पर उसे ख्याल आया कि उसने तो चटखनी लगाई थी फिर वह कैसे अन्दर आया, कहीं विजयसिद्धि मरकर भूत तो नहीं हो गया है? उसने डरते हुए सोचा।

इस बीच वह आकार एक कुर्सी पर बैठ गया। उसने इन्द्रवर्मा से कहा- "मुझे देखकर आश्चर्य न करो। मैं विजयसिद्धि का भूत हूँ। तुम से बात करने के लिए आया हूँ। विजयसिद्धि क्योंकि इतने दिन शहर में था, इसलिए मैं न आ सका।"

"जीते आदमी का भूत कैसे हो सकता है?" इन्द्रवर्मा ने आश्चर्य से पूछा।

"यही गलती हो गई। दो वर्ष पहले विजयसिद्धि ने ऐसा काम किया जिसके कारण वह मर सकता था। जब उसकी





मृत्यु निकट थी। तब मैं उसका भूत बनने के लिए नियुक्त हुआ। और मैंने उसके शरीर की तरह एक शरीर बनवाया। इतने में बूढ़ा ठीक हो गया और में इस बेकार नौकरी में फँस गया हूँ। मैं तुझसे यह पूछना चाहता था कि यदि कोई मरना चाहे और तुझे उस बारे में पहले मालूम हो तो जरा मुझे खबर भिजवा देना। मैं उसके भूत के रूप में नौकरी पाने की कोशिश करने लगूँगा। यह विजयसिद्धि अभी मरता मालूम नहीं होता। यह मैं तुझसे कहना चाहता था। क्यों कि विजयसिद्धि तुम्हारे बगलवाले कमरे में ही सोता है इसलिए मैं तुमसे न कह सका भले ही वह मेरी बात न सुन सके। पर वह तुम्हारा जवाब तो सुन ही सकता है। मैं उससे बहुत डरता हूँ। उसके डर के कारण मैं यहाँ आसपास किसी को नहीं दिखाई देता। अगर तुमने मेरी मदद की तो मैं तुम्हारे प्रेम को सफल बनाने का प्रयत्न करूँगा।" भूत ने कहा।

इन्द्रवर्मा यह जानकर शर्माया कि उसके प्रेम के बारे में भूत भी जानता था। उसने भूत से पूछा- "रोज कितने ही आदमी मर रहे हैं। क्या तुझे कोई नौकरी न मिल सकी?"

"बाबू! तुम नहीं जानते कि इस भूत की नौकरी के लिए कितनी माँग है, इसके लिए भी कितनी ही सिफारिशों की ज़रूरत है। खुद खोजना चाहता हूँ, पर यहाँ फँस गया हूँ। अगर मुझे मालूम हो गया कि फलानी जगह गुञ्जाईश है तो मेरी मदद करने के लिए बहुत-से मित्र हैं। क्योंकि तुम्हें दरबार की बातें मालूम होती रहती हैं इसलिए अगर कोई हत्या या आत्महत्या होनेवाली हो तो मुझसे भी

जरा कह देना। तुम्हारा कर्ज नहीं रखूँगा। इस वाला को पाने के लिए मैं तुम्हारी पूरी मदद करूँगा।" यह कहकर भूत अन्तर्धान हो गया।

अगले दिन भी इन्द्रवर्मा बाला से दिन भर बातें करता रहा। उस दिन शाम को दोनों बगीचे में घूमने गये। पेड़ पौधों के नीचे, चान्दनी में दोनों ने बहुत देर गप्पे लगाई। इन्द्रवर्मा ने अपने प्रेम की बात ही न छेड़ी।



यकायक इन्द्रवर्मा को बाला के पीछे भूत दिखाई दिया-"तुम तो निरे पागल हो। क्यों नहीं बाला से शादी के बारे में पूछते? वह इस प्रतीक्षा में है कि तुम कब यह पूछते हो? उस राक्षस विजयसिद्धि को फिर शहर छोड़कर जाने में दो साल लगेंगे। जब वह यहाँ होगा तुम यह बात कर न सकोगे। अभी कर लो।" भूत ने कहा।

"मुझे उसके बारे में न कहो।" इन्द्रवर्मा ने भूत से कहा।

"किसके बारे में?" वाला ने आश्चर्य से पूछा। उसे भूत की बात न सुनाई दी पर उसने इन्द्रसेन की बात सुनी।

इन्द्रवर्मा घबरा गया। जो मुख में आया उसने कह दिया। "वह भूपति है न? उसकी बात।" उसने कहा।

"उनके बारे में इस तरह बात करना ठीक नहीं। वे बहुत समझदार हैं। भलेमानस हैं। यह भी सुना जा रहा है कि उनको जल्दी ही बड़ी नौकरी भी मिलनेवाली है। वे राजा के सलाहदार होने के लायक भी हैं।" वाला ने कहा।

"यह सब हो सकता है, पर वह मुझे पसन्द नहीं है।" इन्द्रवर्मा ने कहा।

"अगर तुमने फिर मुझसे बात की तो काँटों में खिंचोगे। सावधान रहना चाहिए। क्या तुमने मेरी बताई हुई बात पर कोई जानकारी हासिल की कि नहीं? अभी मत कहो। क्या मैं तुम्हारे कमरे में आऊँ? नहीं तो क्या इस लड़की के जाने तक यहीं रहूँ?" भूत ने इन्द्रवर्मा से पूछा।

इन्द्रवर्मा झुञ्झला उठा। "तुम तुरन्त चले जाओ। तुमसे बातें करने के लिए मेरे पास कुछ नहीं है।" उसने कहा।

बाला ने उसकी ओर घबराकर पूछा। उसका मुँह लाल हो गया। "अच्छा हुआ कि आपने अभी ही यह बात कह दी।" कहकर वह उठी।

"बाला, यह नहीं, जरा एक मिनट ठहर। मेरा मतलब " अभी वह कह ही रहा था कि वह जल्दी जल्दी चली गई।

इन्द्रवर्मा निराश हो गया। "अरे दुष्ट, भूत! मेरी सारी जिन्दगी तूने खाक कर दी है। मेरा सर्वनाश हो गया। तेरी सहायता भाड़ में जाये।" इन्द्रवर्मा ने धमकाया।

"इस तरह की गलतियाँ होती ही रहती हैं। उनका होशियारी से मुकाबला



करना चाहिए। धीरज धरो।" यह कहकर भूत अदृश्य हो गया।

इन्द्रवर्मा उस दिन रात को न सो सका। अगर वह कहता है कि वह बात उसने उसके पिता के भूत से कही थी, उससे नहीं तो वह विश्वास नहीं करेगी। अगर उसने विश्वास भी किया तो डर जायेगी कि उसके घर में भूत है और उसका पिता मरकर भूत हो गया है तो उसका हृदय टूक टूक हो जायेगा। अगर सच न बताया गया तो वह फिर कभी मेरा मुँह न देखेगी।

जैसा उसका भय था वैसा ही हुआ। अगले दिन उसने मुँह सुजाये रखा। उसने बातचीत करनी चाही पर बाला ने मौका न दिया। जब वह उस दिन उद्यान में बैठी हुई थी तो इन्द्रवर्मा ने उसके पास बैठते हुए कहा-"बाला! तुम मुझे गलत समझ रही हो। तुम मुझसे यों ही नाराज हो।"

"आपने जो कल बात कही थी, क्या वह बहुत कड़वी न थी?"

"क्या मैं तुमसे कड़वी बात कह सकता हूँ? अगर मैं सब बात साफ-साफ कह



हूँ तो तुम उसे क्षण भर के लिए भी न समझोगी। एक बाधा है। इसलिए सब कुछ कह नहीं पा रहा हूँ।" इन्द्रवर्मा ने कहा। वाला ने उसकी ओर देखकर पूछा-"कौन-सी है वह बाधा? मेरे पिता ही न?" जब इन्द्रवर्मा ने उसके मुँह की ओर देखा तो उसे लगा कि वह उससे प्रेम ही करती थी।

उसमें थोड़ा साहस आ गया। जब वह अपने प्रेम के बारे में, थोड़ा सरककर कहने ही जा रहा था कि भूत ने आगे बढ़कर पूछा-"तुमने असली बात उससे कही कि नहीं? विजयसिद्धि घर वापस आ रहा है। एक दो मिनट में वह आ जाएगा। एक और खुश खबरी है। मेरी बदली हो गई है। किसी देश में, प्रजा ने विद्रोह करके राजा को मार दिया है। मेरे मित्रों ने मेरी मदद की और मुझे राजा के भूत के तौर पर नियुक्त करवा दिया है। मुझे जल्दी जाना है। नमस्ते।"

इन्द्रवर्मा ने बाला की ओर मुड़कर उसके दोनों हाथ अपने हाथ में लेकर पूछा-"बाला, मुझ से शादी करोगी? इस संसार में मैं तुमसे अधिक किसी को नहीं चाहता।"

"मुझे भी तुमसे अधिक कोई प्यारा नहीं है। मैं पिताजी से कहूँगी कि वे हम दोनों का विवाह कर दें। वे जरूर मान जायेंगे।" बाला ने कहा।

सब ठीक तरह हो गया। विजयसिद्धि अपनी लड़की का विवाह इन्द्रवर्मा से करने के लिए मान गया। पर उसने यह इच्छा प्रकट की कि दामाद उसके घर में ही रहे। इन्द्रवर्मा को राजा के यहाँ नौकरी मिलना, और उसका विवाह एक साथ ही हुआ।





रूपधर की यात्राएँ